

गर्भाशय पर देखने को नहीं मिलती किन्तु सगर्भा के गर्भाशय पर प्रसवकाल की 'द्वितीय अवस्था' में इसका स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। इस समय इसके प्रयोग से गर्भाशय का संकोच होकर गर्भ एवं अपरा का निष्कासन है।

**धमनीसंकोचक या रक्तभारवर्धक अन्तःस्राव [वासोप्रेशन या पिट्रेसिन Vaspression or Pitressin]** कार्य—यह सूक्ष्मधमनियों का संकोच करता है, किन्तु कम मात्रा में देने पर मूत्ररोधक है।

## (2) बीजग्रन्थि [Ovaries]

**स्थान**—श्वोलिंगुहा में गर्भाशय के दोनों और एक 2 स्थित है।

**अन्तःस्राव**—‘बीजग्रन्थि’ से दो प्रकार के अन्तःस्राव समय-समय पर घटित होते हैं।

(1) ऋतुसंजनन रस [Oestrogenic or follicular hormones, Oestrogene Oestrone [Oestrin, Oestriodiol=F.H.] यह बीजपुट [ग्राफियन फोलिकल] से उत्पन्न होता है। इसके तीन तत्व ज्ञात किए गये हैं—इस्ट्रिओल [Oestriol], इस्ट्रोन [Oestrone] और इस्ट्रोडियोल [Oestradiol]।

**कार्य**—[1] ‘यौवनारम्भ’ के समय गर्भाशय और द्वैतीयक लिंग चिह्नों का विकास करना।

2. मासिकस्राव के अनन्तर गर्भाशय की अन्तःकला का पुनर्निर्माण और उपचय करना, रक्तवाहिनियों और कफस्रावीग्रन्थियों की वृद्धि करना।

3. गर्भावस्थाकाल में गर्भाशय का अत्यधिक उपचय करना।

4. स्तन में स्तन्यवाहिनियों का विकास करना।

5. पीयुषग्रन्थि के पूर्वखण्ड की क्रिया को रोकना।

6. स्तन्य की मात्रा कम करना।

(2) क्षेत्रसंजनन रस [Progesterone, Progestin, Luteal hormone =L.H.] इसकी उत्पत्ति बीजपुटकिणा=पीतपिण्ड [Corpus Luteum] से होती है।

यह स्राव गर्भवती के मूत्र में भी मिलता है।

**कार्य**—1. ‘इस्ट्रोजन’ द्वारा गर्भाशय की अन्तःकला पर कार्य कर लेने के पश्चात् यह उसे उत्तेजित करता है तथा गर्भाशय की अन्तःकला में आर्तव-पूर्वकालिक अवस्था (Secretary Stage) का निर्माण करता है।

2. गर्भावस्था के प्रारम्भिक दिनों में ‘गर्भवराकला’ (Decidua) का नियमन करना और उसे बनाये रखना।

3. गर्भाशय-पेशियों का गर्भावस्था में काठिन्य बनाये रखना, जिससे गर्भपात न हो।

4. स्तनों में स्तन्यग्रन्थियों (Lactic Glands) का विकास करना।

**चुलिलका ग्रन्थि**—(Thyroid Gland)

**स्थान**—ग्रीवा के सामने की ओर अवदु के नीचे दोनों और फैली हुई है।

**अन्तःस्राव-थाइरोक्सिन [Thyroxine]**। कार्य—शरीर के धातुपाक [Metabolism] का नियंत्रण करना; धातुगत ओक्सिजनीकरण [Oxydation] की क्रियाओं का नियंत्रण करना; आर्तवस्राव पर प्रभाव करना।

**अधिवृक्कग्रन्थि (Adrenal or Suprarenal Gland)**—

**स्थान**—प्रत्येक वृक्क के ऊपर एक होती है।

**अन्तःस्राव**—(1) एड्रेनलिन (Adrenalin)—इसकी उत्पत्ति ‘अधिवृक्क मध्य’ (Medulla) से होती है।

**कार्य**—छोटी रक्तवाहिनियों का संकोच करना, रक्तभार को बढ़ाना, श्वासनलिकाओं (Bronchil) का विस्तार करना।

[2] कोर्टिन (Cortin)—इसकी उत्पत्ति वल्कभाग (Cortex) से होती है।

**कार्य**—धातुओं में लवण एवं जल के संतुलन का नियंत्रण करना, स्तब्धता (Shock) के प्रति सहनशीलता या सामर्थ्य प्रदान करना।

लैंगिक क्रियाओं को प्रभावित करना। अधिवृक्क ग्रन्थि का अवृद्ध होने पर स्त्रियों में नरसदाश द्वैतीयक लिंग-चिन्ह प्रकट हो जाते हैं, यथा—मुख पर दाढ़ी-मूँछे निकलना, कामच्छव की वृद्धि, स्वर का भारीपन, तथा नर-समान स्वभाव और चेष्टाएं करना।

**अन्तःस्रावों का चिकित्सितीय उपयोग**—

आधुनिक अनुसंधानों से यह प्रमाणित हो चुका है कि उपर्युक्त अन्तःस्रावों का उपयोग प्रसव और स्त्रीरोगों की अनेक ग्रन्थियों में लाभप्रद होता है। इनका प्रयोग मुखमांग, अधस्तवगीय मूच्चीवेद, मांसगत सूचीवेद अथवा स्थानिक फ्लेप या मक्ख के रूप में किया जाता है।

(1) **इस्ट्रोजन अन्तःस्राव (Oestrogenic Hormone)**—इसका उपयोग निम्न विकारों में किया जाता है:—

1. योनिशोथ [यौवनारम्भ से पूर्व, आर्तवनिवृत्ति के अनन्तर]। 2. आर्तवनिवृत्ति जन्य उपद्रव। 3. आर्तवादर्शन। 4. कष्टातर्व [आर्तवकालिक पीड़ा]। 5. गर्भाशय की क्रियाहीनता। 6. स्तन्यप्रवृत्ति की कठिनाईयां [स्तनपीड़ा, दुरधात्पत्ता]। 7. अपूर्ण गर्भस्राव तथा मृतगर्भ होने पर गर्भ को बाहर निकालने के लिए।

(2) **प्रोजेस्टेरोन (Progesterone)**—यह निम्न विकारों में प्रयुक्त होता है—

1. गर्भस्राव या गर्भपात को रोकने के लिए।

(3) **अ-पीयुषपूर्वखण्ड** के अन्तःस्राव—1. बीजपुटप्रवर्तक अन्तःस्राव (F. S. H.)

यह आर्तवादर्शन में उपयोगी है। 2—बीजपुटकिणा प्रवर्तक अन्तःस्राव (L. H.)—यह

मेनोरेजिया में उपयोगी है। 3—दोनों अन्तःस्राव-वन्ध्यात्व में उपयोगी है।

(आ) **पश्चिमखण्ड** के अन्तःस्राव-पश्चिमखण्ड के सब अन्तःस्रावों के मिश्रण को

‘पिट्यूट्रीन’ कहते हैं। यह—1. गर्भाशय से गर्भ एवं अपरा को निकालने के लिए।

2. प्रसव के बाद रक्तस्राव को रोकने के लिये । 3. गर्भस्राव कराने के लिए । 4. निषात् (Collapse) की दशा में रक्तचाप की वृद्धि करने के लिए प्रयुक्त होता है ।

(4) पुरुषाण्डग्रन्थि-अन्तःस्राव 'टेस्टोस्टेरोन' (Testosterone)-यह निम्न विकारों में लाभप्रद है:— 1. कष्टार्तव [ईस्ट्रोजन के सहायक के रूप में उपयोगी है] 2. अनियमित रक्तस्राव, 3. क्रियात्मक गर्भाशयिक रक्तस्राव, 4. स्तन्य की कमी, 5. स्तन का कैंसर और कोष्ठ का निर्माण (Chronic cytotic mastitis), 6. आर्तव-निवृत्तिकालीन लक्षणों और रक्तस्राव में, 7. गर्भाशयपेशी का तनाव होने पर ।



## अध्याय- 20

### सन्तति-निग्रह (CONTRACEPTION OR BIRTH-CONTROL)

सन्तानोत्पत्ति करना मानव का प्राकृतिक कर्म है । प्राचीन आर्य जीवन में सन्तानोत्पत्ति को श्रेष्ठ और सौभाग्य का चिन्ह मानते थे । ग्रंथिक पुरुषों वाला व्यक्ति बहुत-सी शाखाओं से युक्त वृक्ष की भाँति समाज में आदर का पात्र समझा जाता था । इसी दृष्टि से नारी का स्थान भी पूजनीय था । कालक्रम से आज वह स्थिति बदल गई है । सन्तति-निग्रह के प्रश्न पर सम्प्रति विभिन्न विद्वानों ने विचार प्रस्तुत किये हैं । इसका वास्तविक उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति को बिल्कुल बन्द करना नहीं है, अपितु बहुत कम कालांतर से सन्तानों के जन्म को रोकना तथा सन्तान संख्या का नियमन करना है । प्रजननशास्त्र (Eugenics युजेनिक्स) का नियम है कि योग्य और गुणवान् सन्तानों की उत्पत्ति के लिए बच्चों का जन्म 4 या 5 वर्षों के अन्तर से होना चाहिए । जम्दी-जल्दी बच्चों का जन्म होना, शिशु और माता दोनों के लिए हानिकारक है; साथ ही मानवजाति, समाज और राष्ट्र के लिए भी हानिकारक है । अतएव संतति-निग्रह का मूल लक्ष्य संतान-जन्म को वैज्ञानिक उपायों से नियमित करना है ।

व्यावहारिक और चिकित्सितीय दृष्टिकोण से जिन कारणों से संतति-निग्रह की आवश्यका है, वे निम्न हैं—

#### 1. सामाजिक कारण-

देश में खाद्य समस्या का प्रादुर्भाव, जिसका प्रमुख कारण प्रतिवर्ष बढ़ती हुई जन-संख्या है । वेकारी, दारिद्र्य, आर्थिक संकट, निवास-संकट, जाति और समाज के लिए अयोग्य-अनुपादेय सतान उत्पन्न करना आदि भी इसके कारण हैं । प्रजननशास्त्र (Eugenics) के विद्वानों का विचार है कि जैसे-जैसे मनुष्यवंश का अधि विस्तार होता जायेगा, वैसे-वैसे मनुष्य दुर्बल और कम आयु वाला होता जायेगा । जीवन या आयु की दीर्घता कम होती जाने से एक दिन सम्पूर्ण मानवजाति नष्ट हो जाएगी । आयुर्वेदग्रंथों में भी लिखा है कि आयुमान का क्रमशः हास होता जा रहा है । चरकसंहिता के अनुसार क्रमशः प्रत्येक युग (सतयुग या कृतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग) में मनुष्य की आयु सौ-सौ वर्ष घटती गयी । देखिये च.स., विमानस्थान, अ. 3/24-26) । साथ ही कम संतान होने पर उनका शारीरिक और मानसिक विकास भी सम्यक्तया हो पाता है, जिससे जाति और समाज के उत्थान में सहायता मिलती है । धनाभाव के कारण गरीब और दुर्बल संतान को समुचित शिक्षा, जीवन के ऊंचे आदर्श और सुविधाएं प्राप्त करने में बाधा होती है । अतएव परिवार, जाति, समाज और राष्ट्र की उन्नति की दृष्टि से कम संतान की उत्ति उचित होती है ।

#### 2. चिकित्सितीय कारण

चिकित्साशास्त्र की वृष्टि से निम्न दो प्रकार के कारण होते हैं—

1. स्वास्थ्यरक्षात्मक (Preventive)
2. चिकित्सात्मक (Curative)

### [ 1 ] स्वास्थ्यरक्षात्मक कारण-दोहें—

1. माता के स्वास्थ्य की रक्षा और 2. शिशु के स्वास्थ्य की रक्षा।

जल्दी-जल्दी गर्भधारण करने तथा अधिक सन्तानोत्पत्ति करने से स्त्री का स्वास्थ्य और सौन्दर्य खराब हो जाता है तथा वह सूतिकारोग, रक्ताल्पता (एनिमिया, पांडु) प्राणों और प्रजननांगों सम्बन्धी अनेक रोगों से पीड़ित हो जाती है। 16 से 18 वर्ष की आयु से पूर्व गर्भधारण करना भी स्वास्थ्यनाशक होता है।

कम कालांतर से अनेक संतानों का जन्म होना शिशु के स्वास्थ्य पर भी प्रभाव डालता है। माता के स्तन्य की कमी और पोषणाभाव से शिशु शारीरिक स्वास्थ्य तथा परिवार के बातावरण में अबहेलना-उपेक्षा, असावधानी से शिशु के मानसिक स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। रोग होने पर उनका सम्ब्रक्त उपचार भी सम्भव नहीं हो पाता। माता-पिता और देश पर ऐसी संतानें भारस्वरूप होती हैं।

(2) चिकित्सात्मक कारण—निम्न ऐसी परिस्थितियाँ हैं, जिनमें स्त्री को ध्यान रखते हुए सन्तति-निग्रह करना आवश्यक होता है।

(1) गर्भपात—कभी-कभी स्त्री में स्वाभाविक रूप से गर्भपात हो जाने की प्रवृत्ति (Recurrent Abortion) बन जाती है। चार-पांच वर्ष के अन्तराल में गर्भधारण होने पर प्रवृत्ति का पर्याप्त-प्रतिबंधन हो जाता है।

(2) स्त्री और पुरुषों के निम्न शारीरिक रोगों में भी सन्तति-निग्रह की आवश्यकता होती है।

(अ) सांघातिक रोग (Fatal Diseases)—राजयक्षमा (Tuberculosis), प्रमेह और बहूमूत्र (Diabetes) वातरक्त, पाण्डु, जीर्ण-तीव्रवृक्कशोथ, हृदयरोग, उच्च रक्तचाप, गर्भांशय और डिम्बग्रन्थि के रोग। इन रोगों की उपस्थिति में गर्भधारण हो जाने पर स्त्री की मृत्यु हो जाती है।

(अ) आनूचंशिक रोग (Hereditary Diseases)—कुछ (Leprosy), यक्षमा (T.B.), फिरंग (Syphilis), उन्माद (Insanity), अपस्मार (Epilepsy), मानसिक दुर्बलता (Feeble mindedness), आनूचंशिक आंध्य (Blindness), पक्षाधात आदि बातिक रोग। ये रोग माता-पिता से संतान में भी आते हैं। ऐसी संतान दुर्बल, अयोग्य, रोगपीड़ित और अल्पायु होती है।

(इ) योनसंसर्गजरोग (Venereal Diseases)—गनोरिया (Gonorrhoea), फिरंग (Syphilis)। ये रोग मैथुन-क्रिया द्वारा स्त्री-पुरुष में परस्पर संक्रान्त हो जाते हैं। अतः मैथुन में गर्भरोधक उपायों द्वारा सावधानी बरतनी आवश्यक होती है।

(3) किसी-किसी स्त्री में प्रत्येक बार की गर्भधारणा में गर्भज विषप्रभाव उत्पन्न होकर उन्माद, अतिवमन, गर्भपतानक (एक्लेप्सीया) आदि भयंकर रोग हो जाते हैं। प्रसव के बाद भी यही स्थिति बन जाती है। ऐसी स्थिति में कुछ काल तक गर्भस्थिति को रोकना पड़ता है।

(4) संकुचित श्रोमि (Contracted Pelvis)—जिस स्त्री का श्रोमिचक्ष छोटा और संकीर्ण होता है, उसमें काटप्रसव मूढ़नर्म हो जाता है और प्रतिबार शल्यकर्म द्वारा गर्भ का निपक्षासन किया जाता है। इससे माता और शिशु दोनों के प्राणनाश की संभावना रहती है।

(5) प्रजननांगों में नाड़ीवृण-भग्नदर-का उपस्थित होना अथवा उसका भर जाना, प्रजननांगों की स्थानच्युति—इन दण्डों में भी गर्भधारणा होने से रोकना आवश्यक होता है।

यह सत्य है कि भारतवर्ष में भी बहुत प्राचीनकाल से संततिनिग्रह के संबंध में ज्ञान प्रचलित था। कामशास्त्र के कामसूत्र, अनंगरंग, नागरसर्वस्म, आदि ग्रन्थों में जिनकी रचना ई. 6ठी शताब्दी या इससे पूर्व हुई थी, अनेक ऐसे योग मिलते हैं, जिनसे गर्भधारणा नहीं हो पाती।

परवर्ती तात्त्विकग्रन्थों (इन्द्रजालआदि संग्रह, कुचिमारतन्त्र, उड्डीशतंत्र, कामरत्न, पवनविजयस्वरोदय आदि) में गर्भनिरोधक तांत्रिक एवं औषध प्रयोग प्रचुर प्रमाण में उपलब्ध होते हैं।

ऐसे ही कुछ प्रयोग मध्यकालीन आयुर्वेदीय ग्रन्थों में भी मिलते हैं—जैसे भावप्रकाश, भैषज्यरत्नावली आदि। रसग्रन्थों में भी इनका अनेक स्थानों पर उल्लेख मिलता है। इन प्रयोगों और प्रक्रियाओं की फलश्रुति के आधार पर इनको निम्न पांच वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(1) स्थानिक रूप से, योनि के आम्भ्ययंतर प्रयोग किये जाने वाले योग, जिनसे संभोगोपरांत या तो शुक्राणु मर जाते हैं, अथवा गर्भशय तक नहीं पहुंच सकते।

(2) आम्भ्यंतर सेवन या स्थानिक प्रयोग से स्थायी या अस्थायी काल के लिए पुरुष और स्त्री में वंध्यत्व उत्पन्न कर दिया जाता है।

(3) कुछ प्रयोग स्त्री में आरंबप्रवृत्ति (तथा डिम्बाणु की उत्पत्ति) को रोक देते हैं।

(4) पुरुष को वंध्य करने के प्राचीनकाल में शल्यकर्म भी प्रचलित थे।

(5) गर्भपातकारक प्रयोग।

परन्तु इन सब प्रयोगों की व्यावहारिक विधि, औषधियों के योग और मात्रा, सेवनकाल आदि का इन ग्रन्थों में स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है। कुछ योग तो ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी वृद्ध महलाएं, दाईयां आदि सफलतापूर्वक प्रयुक्त करती हैं।

नव्यविज्ञानशास्त्रियों ने सन्ततिनियमन पर विस्तारपूर्वक और अनेक विष्टकोण से विविध रूप से विचार किया है। उनका भी यहां ऊहापोहपूर्वक विचार कर विवरण प्रस्तुत करना अप्रांसंगिक न होगा।

### सन्तति-निग्रह की सम्भावना

गर्भधारणा और सन्तानोत्पत्ति होने के लिए सुश्रुत के मतानुसार जिस प्रकार कृतु-क्षेत्र (भूमि), जल और बीज के संयोग से अंकुर की उत्पत्ति होती है, उसी प्रकार कृतु के रूप में कृतुकाल, क्षेत्र के रूप में गर्भधारणाक्षम गर्भाशय, जल के रूप में माता के शीर से प्राप्त होने वाले रस-रक्त एवं बीज के रूप में स्त्रीबीज व पुंबीज के विधिपूर्वक संयोग से गर्भ का प्रादुर्भाव होता है।

ध्रुवं चतुर्णा सान्तिन्ध्याद् गर्भः स्याद्विधिपूर्वकः ।

कृतुक्षेत्राम्बुद्धीजानां सामग्यगदङ्क रो यथा ॥ [सु. शा. 2/33]

अतएव इन चारों में से किसी एक का अभाव होने से गर्भधारणा नहीं होगी। इसी आधार पर सन्ततिनिग्रह के लिए निम्न शर्तें आवश्यक हैं—

1. शुक्राणुओं और स्त्री के डिम्बाणु के मिलन को रोकना—
2. शुक्राणुओं की उत्पत्ति रोकना, अथवा स्त्री के डिम्बाणु से मिलने के पहले ही उन्हें निष्क्रिय करना या नष्ट करना।
3. स्त्री-डिम्बाणु के परिपाक को रोकना तथा परिपक्व डिम्बाणु को नष्ट करना।
4. शुक्राणु और डिम्बाणु के मेल से उत्पन्न गर्भवीज (Fertilized Ovum) को नष्ट करना।
5. गर्भाशय में स्थित गर्भ को नष्ट करना (गर्भन्धाव या गर्भपात)।

सन्तति-निग्रह हेतु प्रयुक्त होने वाली समस्त विधियों का लक्ष्य उपर्युक्त में से कोई एक या अधिक बातें होती हैं।

सन्तति-निग्रह के लिये जो विधियां प्रयुक्त होती हैं, उनको निम्नानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है—

- (1) अस्थायी (Temporary)
- (1) संयम या ब्रह्मचर्य
- (2) परिश्रमपूर्वक स्खलित शुक्र का निष्कासन (Gymnastic Contraception)
- (3) अन्य सामान्य विधियां
- (4) दीर्घकाल तक स्तन्यपान कराना (Prolonged Lactation)
- (5) मैथुन की विशिष्ट विधियां
- (6) योनि-प्रक्षालन
- (7) 'सुरक्षितकाल' विधि
- (8) यांत्रिक विधियां—(प्र) पुरुष के लिए, (आ) स्त्री के लिए

(9) औषधि प्रयोग (अ) बाह्य औषधि प्रयोग तथा रासायनिक निष्क्रियां (आ) आम्यन्तर औषधि प्रयोग।

(10) गर्भपात

(2) स्थायी (Permanent)—

(11) शस्त्र-कर्म (Surgical operation or sterilization)

[अ] पुरुषों के लिए (Vasectomy)

[आ] स्त्रियों के लिए (Tubectomy)

1. संयम और ब्रह्मचर्य [Abstinence Or Abstention] एवस्टिनेंस या एबस्टेन्शन संतति-निग्रह का प्राथमिक और निश्चित उपाय है, सम्मोग की इच्छा न करना। इसके लिये ब्रह्मचर्य-पूरण जीवन व्यतीत करना चाहिये। मन पर पूरण निग्रह करके यह संभव किया जा सकता है।

2. परिश्रमपूर्वक स्खलित शुक्र का निष्कासन—

सामान्यतया मैथुन के पश्चात् तुरन्त उठ बैठना, कूदना, धूमना, खड़े होना, उठना-बैठना, खांसना आदि क्रियाओं के करने से भी गर्भ के न रहने की सम्भावना प्रकट होती है। क्योंकि स्खलित शुक्र का अधोगमन होने से स्त्रीबीज से संसर्ग भी टल जाता है। परन्तु पूरण विश्वास के साथ इसका निश्चय नहीं है।

3. अन्य सामान्य विधियां—

कभी-कभी मैथुन के पश्चात् स्त्री द्वारा मूत्रत्याग कर देना, मलत्याग करना, शुक्र स्खलित होने से पूर्व स्त्री द्वारा जांघों को सिकोड़ लेना, मैथुन के तुरन्त बाद शीतल जल पी लेना आदि उपायों से भी गर्भ नहीं रहता।

मैथुन के उपरान्त स्त्री की कमर के नीचे तकिया या मोटा कपड़ा लपेटकर रख दिया जाता है। इससे योनि का रुख नीचे रहता है और स्खलित शुक्र गुरुत्वाकर्षण से नीचे आ जाता है। परन्तु यह विधि विश्वासयोग्य नहीं है।

4. दीर्घकाल तक स्तन्यपान कराना—

ऐसी मान्यता है कि प्रसवोपरान्त शिशु को लम्बे समय तक [2-3 वर्षों तक] स्तन्य पान कराने से शीघ्र गर्भधारणा नहीं होती। परन्तु यह विधि विश्वसनीय नहीं है।

5. मैथुन की विशिष्ट विधियां—

[अ] अपूरण मैथुन की प्रक्रिया [Coitus Interruptus]-मैथुन के समय शुक्र को योनि के भीतर न छोड़कर बाहर ही छोड़ दिया जाता है। परन्तु इसमें पूरण विश्वास नहीं किया जा सकता क्योंकि स्त्री-सहवास में अज्ञात रूप से कुछ न कुछ शुक्र निकल जाता है।

[आ] धारक मैथुन (Coitus Reservatus)-योनि में बिना घर्षण किये उत्थित शिशन का बहुत देर तक रखना तथा शिथिल होने पर निकाल देना।

[इ] विलम्बित मैथुन (Coitus Prolongatus)-योनि में उत्थित लिंग का घर्षण

तभी हो सकता है जब पूर्व से नियमित तपक्रम लिया जाता रहा हो ।

2. उदर में हल्की वेदना 2. योनि से स्राव या हल्का रक्तस्राव 4. स्त्री में तीव्र मैथुनेच्छा जागृत होना ।

सुरक्षित-काल-विधि को पूर्ण विश्वसनीय नहीं माना जा सकता ।

यदि आर्तवचक्रकाल अनियमित होता है तो 'सुरक्षितकाल' का प्रयोग संतति-निय्रह हेतु नहीं करना चाहिये । विशेषकर प्रसवोपरांत तथा आर्तवनिवृत्ति (Menopause) के निकट समय पर आर्तवचक्रकाल अनियमित हो जाता है । डिम्बपरिपाककाल में स्त्री की तीव्र मैथुनेच्छा भी इसमें बाधक सिद्ध होती है ।

[ 8 ] यान्त्रिक विधियाँ—पुरुष और स्त्री द्वारा प्रयोग करने के निश्चिट उपकरण या यन्त्र मिलते हैं । इनका उद्देश्य स्खलित शुक्र को गर्भाशय तक पहुंचने से रोकना है ।

(अ) पुरुषों के लिए—दो प्रकार के उपकरण प्रयुक्त होते हैं—

[ 1 ] शिश्नावरणिका टोपी-(फ्रेंच लेदर French Leather or F.L., कण्डोम Condom, शीथ Sheath) यह रबर, सेल्युलाइड, लैटेक्स या पतले चमड़े की बनी हुई थैली जैसी रचना होती है, जो  $1\frac{1}{2}$  से 2 इन्च व्यास तथा 6 से 8 इन्च लंबाई की होती है । इसे मैथुन से पूर्व पुरुष शिश्न पर चढ़ा लेता है । पश्चात् मैथुनकाल में च्युत हुआ शुक्र इसी टोपी में रुक जाता है, योनिमार्ग में नहीं जाता । कुछ टोपियों में आगे की प्रोर उभार या टोंटी होती है, इसमें शुक्र एकत्रित हो जाता है ।

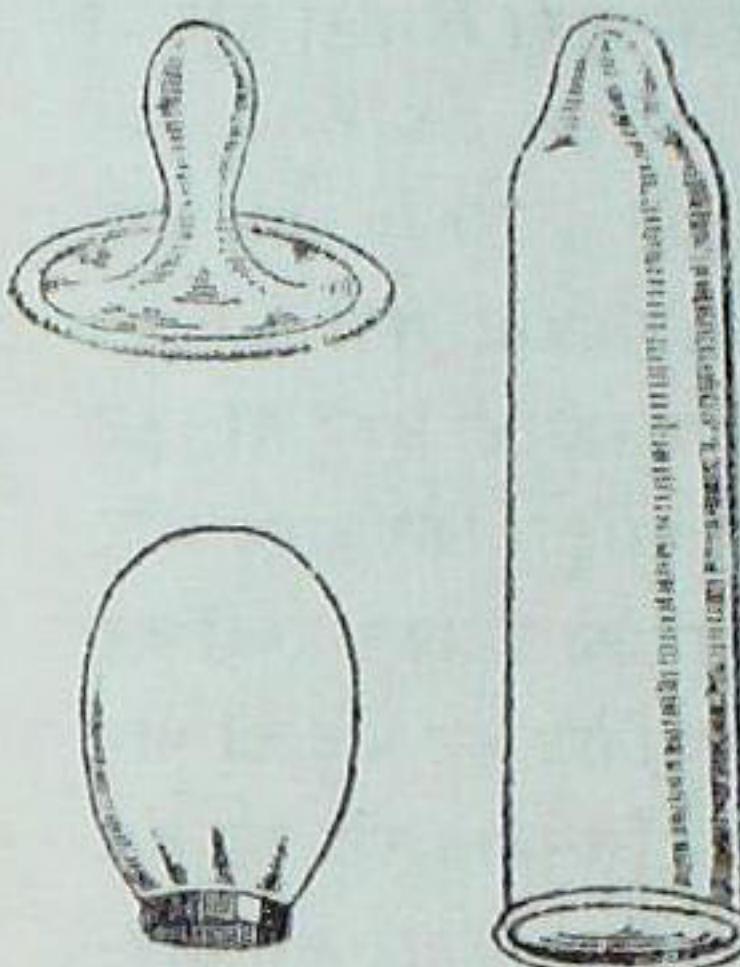
'कण्डोम' का निर्माण पतले रबर से होता है, अतः एक बार काम में लेने के बाद केंद्र दिया जाता है ।

'शीथ' का निर्माण धोने योग्य मोटे रबर से होता है, अतः प्रयोग के बाद इसे सावुन और जल से धोकर साफ कर लेना चाहिये और कई बार प्रयुक्त किया जा सकता है ।

कण्डोम अथवा शीथ को गोल लपेट कर उपस्थित शिश्न पर मोजे या जुर्बि के समान चढ़ा लेना चाहिए । इसे मैथुन प्रारम्भ करने से पूर्व चढ़ाना उपयुक्त रहता है, न कि शुक्र स्खलन से ठीक पूर्व । चढ़ाने के पहले फूंक से हवा भर कर देख लें कि कहीं छिद्र तो नहीं है । चढ़ाते समय शिश्नाग्र के पास कण्डोम या शीथ का कुछ भाग खाली रखना चाहिये, जिसमें स्खलिक शुक्र एकत्रित होता है और उसके दबाव से कण्डोम या शीथ के फटने का भय नहीं रहता । कण्डोम का प्रयोग आसान है और नवविवाहितों में भी सुविधापूर्वक किया जा सकता है । परन्तु कभी-कभी मैथुनकाल में कण्डोम या शीथ के फट जाने या खिसक जाने का भय रहता है । तदर्थं सावधानी बरतनी चाहिये ।

आजकल बाजार में निरोध, ड्युरेक्स, ड्युरापेक, गोल्ड कॉइन के नाम से शीथ या कण्डोम मिलते हैं ।

(2) अमेरिकन टोपी(American Tip)—यह रबर या लैटेक्स(Latex) की बनी छोटी टोपी होती है, जिसे केवल शिश्नाग्र पर ही चढ़ाया जाता है, पूरे शिश्न पर नहीं । इसके खुले किनारे पर प्रसरणशील रिंग होती है, जिससे यह शिश्नाग्र (मुण्ड) के पीछे की वाई में ठीक बैठ जाती है । इससे शिश्न का शेष भाग खुला रहता है ।



1. शीथ (दाहिनी ओर)

2. मुड़ा हुआ शीथ या शिश्नावरणिका टोपी

3. अमेरिकन टोप (नीचे बांधी ओर)

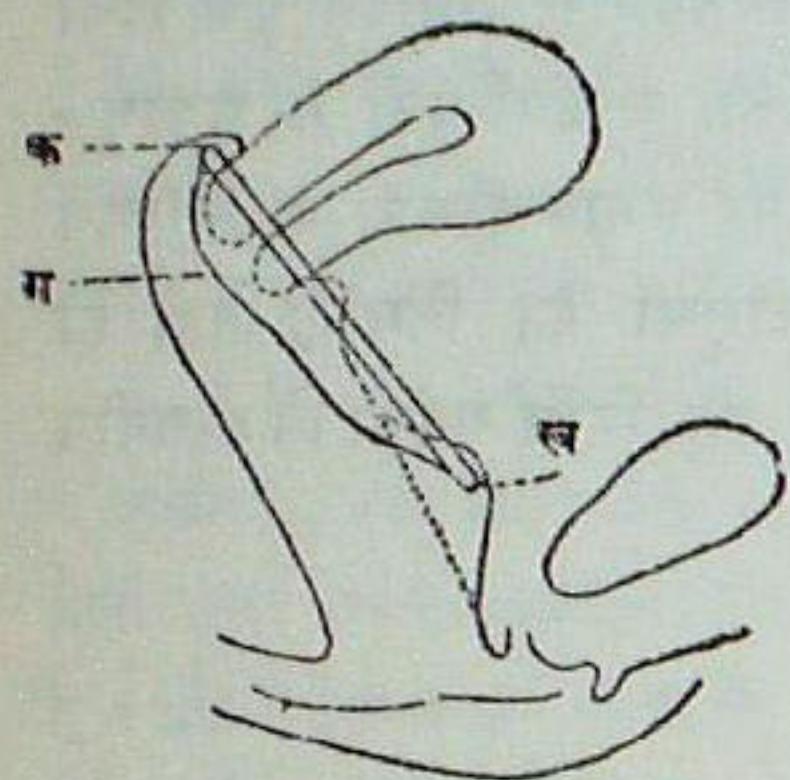
[ 2 ] स्त्री के लिये [अ] बहिर्भास्त्रिक विधियाँ—शुक्राणु को गर्भाशय में जाने से रोकने के लिये स्त्री की योनि और गर्भाशयमुख पर प्रयोग करने के लिये अनेक प्रकार की अवरोधक [Occlusive Caps] मिलती हैं ।

1. फीमेलशीथ [Female Sheath]—यह रबर या लैटेक्स की बनी हुई तथा उल्टे कण्डोम जैसी होती है । इसे स्त्री योनिगुहा में प्रविष्ट कर लेती है । मैथुन के अनन्तर शुक्र इसी शीथ में रह जाता है ।

2. चैक पैसरी—यह रबर या प्लास्टिक की बनी प्यालेनुमा आकृति की टोपी होती है । यह नम्बरों की मिलती है—नं. 1, नं. 2, नं. 3 । नवविवाहिता या एक संतान वाली को नं. 1 पैसरी, दो से पांच संतानों वाली स्त्री को नं. 2 की पैसरी तथा छः या अधिक बच्चों वाली स्त्री को नं. 3 पैसरी का प्रयोग करना चाहिये । ये नम्बर क्रमशः बड़ी पैसरी के सूचक हैं । स्त्री को उकड़ू बैठकर इसे भीतर लगाना चाहिये । उकड़ू बैठने से गर्भाशय-ग्रीवा का बहिर्दारि काफी नीचे ग्रा जाता है । अंगूठा और तर्जनी से पैसरी को दबाकर वायुरहित चपटा कर लेना चाहिये । फिर इसे योनि में धीरे-धीरे ऊपर खिसकाना चाहिये । इसका ऊपरी भाग योनि के परिच्छमी कोण (Posterior Fornix) से ग्रा जाने तथा नीचला भाग योनि के पूर्वी कोण (Anterior Fornix) के साथ सटकर मिल जाने

पर पैसरी के ठीक बैठ जाने का अनुमान होता है। पुनः पुनः इसके किनारों को दबाकर गर्भाशयग्रीवा के चारों ओर ठीक से सटा देना चाहिये। ठीक तरह से पैसरी लग जाने पर स्त्री को यह अनुभव नहीं होता कि कोई वस्तु योनि के भीतर रखी हुई है।

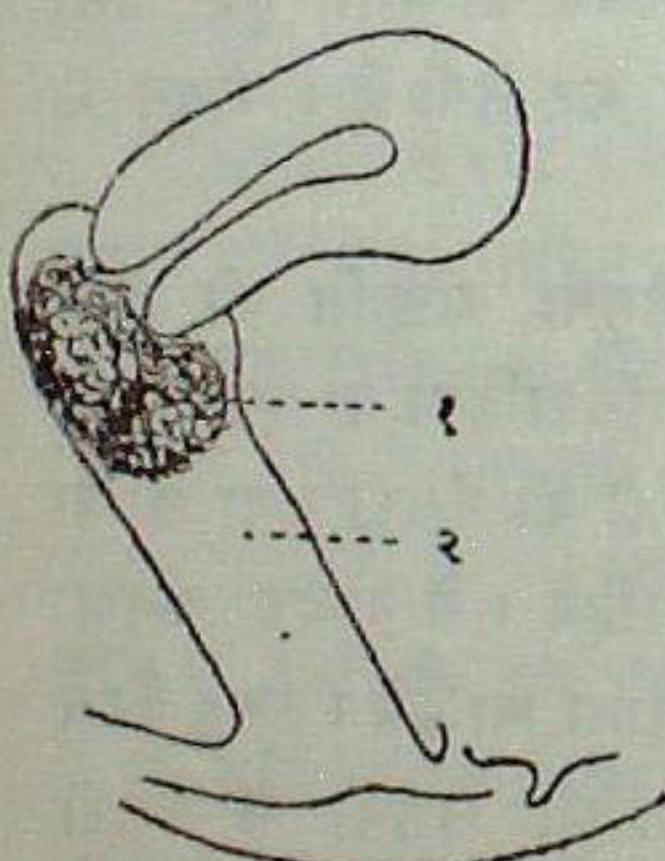
3. वेजाइनल डाइफ्राम या डच कैप (Vaginal Diaphragm or Dutch Cap) यह चैक पैसरी से बड़ी अद्वृगोलाकार ब्वर की टोपी होती है। इसका किनारा लोहे की स्प्रिंग से युक्त होने से कड़ा होता है। यह 50 से 100 मिलीमीटर तक व्यास वाले किनारे की मिलती है। अप्रसवा अथवा एक-प्रसवा में प्रायः 65 से 70 मि. मी. तथा बहुप्रसवा स्त्री में 75 से 80 मि. मी. व्यास के डच कैप की आवश्यकता होती है।



योनि में अंगुली डालकर देखने से अंगुली किनारे से पार नहीं होगी तथा गर्भाशय रबड़ के नीचे प्रतीत होगा। इस कैप के साथ किसी शुक्राणुनाशक जैली का प्रयोग भी करना चाहिये। सायंकाल प्रविष्ट की गई कैप को प्रातः निकालें। निकालने से पहले योनि-प्रक्षालन कर लेना चाहिये।

4. धातु की पैसरियों का भी प्रयोग होता है, परन्तु ये कष्टकर होती हैं।

5. स्पंज (Sponge)—यह गोल और रेशम के डोरे से बंधा रहता है। यह



स्पंज की तरह रुई और ऊन प्लोत (Cotton-wool tampons) का भी प्रयोग किया जा सकता है।

योनि में स्पंज की स्थिति

यथाशक्य बड़ा होना चाहिये, जिससे गर्भाशय-मुख ढंक जाय। प्रयोग के पहले लवण-विलयन से स्वच्छ निचोड़कर तिलतैल या जैतूनतैल या नीम के सुगन्धित तैल में

भिगोकर, पुनः निचोड़कर, उकड़ू बैठकर स्त्री मैथुन से पूर्व अन्दर रख ले। इसे इस प्रकार रखना चाहिये कि गर्भाशय मुख ढंक जाय। स्पंज से शुक्राणु शोषित हो जाते हैं तथा तैल प्रयोग से नष्ट हो जाते हैं। प्रातः स्पंज को निकालकर डूँगिंग कर लेना चाहिये। **अन्तर्गर्भाशयिक यान्त्रिक विधियाँ(Intra-uterine Contraceptive devices—I.U.C.D.)**

इस पर कुछ विस्तार से प्रकाश ढालेंगे, क्योंकि भारत में आजकल सन्ततिमित्रही की यह प्रणाली सर्वाधिक प्रचलित है। प्राचीनकाल में गर्भधारणा को रोकने के लिए ऊंटनी के गर्भाशय में पोली नलिका द्वारा चिन्हने गोल पत्थरों को प्रविष्ट करने की प्रणाली अरबों में प्रचलित थी।

आजकल स्त्री के गर्भाशय में प्रवेश करने हेतु 'लाइपस लूप' का प्रयोग हो रहा है।

1929ई. में डॉ. ई. ग्राफेनबर्ग (Grafenberg)ने चांदी की रिंग का प्रयोग गर्भाशयमुहा में प्रवेश करके किया था। इसे 'ग्राफेनबर्ग रिंग' कहते हैं। यह मोड़े हुए चांदी के तार का रिंग होता है, जिसका व्यास 1 इंच से  $1\frac{1}{2}$  इंच तक होता है। गर्भाशय में इसकी उपस्थिति से गर्भित बीज (Fertilized ovum) का गर्भाशय में वपन नहीं हो सकता है। आर्तवस्थाव और मैथुनक्रिया में इससे बाधा भी नहीं होती। वर्ष में एक बार इसे निकालकर साफकर पुनः प्रवेश करा देना चाहिये। कभी-कभी इसकी स्थिति के कारण गर्भाशय में शोथ, दाह, व्रण ले सकते हैं तथा बाद में कैंपर भी बन सकता है। डिम्बवन्धि और वीजवाहिनियों में भी जक्कमण पहुंचकर शोथ और वेदना हो सकती है। ग्राफेनबर्ग रिंग के सिद्धांत पर लाइपस लूप का निर्माण हुआ है। यह अमेरीका के 'एस' (S) अक्षर के द्विगुणित स्वरूप का होता है। यह पोलिथिन का बना हुआ होता है और इसके पिछले सिरे पर नाइलोन का डोरा होता है। यह चार लम्बाईयों में प्राप्त होता है—25 मिलीमीटर, 27.5 मि.मी., 30 मि.मी. तथा 31 मि.मी.। लूप में पोलिथिन के साथ वेरियम मिला होता है जिससे यह शरीर के भीतर क्षक्तिरण द्वारा स्पष्ट देखा जा सकता है। इसे गर्भाशय के भीतर प्लास्टिक की एक पोली नलिका द्वारा प्रविष्ट कराया जाता है जिसमें पीछे के सिरे में  $1\frac{3}{4}$  इंच पर एक उभार होता है।

मूत्रत्याग कराकर स्त्री को टेबल पर चिट लेटा दिया जाता है। श्रोणिपरीक्षण करने के उपरांत योनिविस्फारकयंत्र द्वारा गर्भाशयग्रीवा को स्पष्ट कर लिया जाता है। 'एलिस फारसेप्स' (Allis Forceps) द्वारा ग्रीवा-मुख को नीचे लींचकर, लूपयुक्त नलिका (Tubal inserter) को आम्यंतर ग्रीवा-मुख में प्रविष्ट किया जाता है और नलिका प्लंगर (Plunger) की सहायता से गर्भाशयमुहा में खिसका दिया जाता है फिर नलिका को निकाल लेते हैं। लूप को नाइलोन डोरे की सहायता से आसानी से बाहर लीचा जा सकता है। प्रयोग से पहले लूप और नलिका को पूर्ण चिसंक्रमित कर लेते हैं। **अनन्तर निरीक्षण**—लूप प्रवेश करने के बाद स्त्री का परीक्षण एक माह में,

तीन माह के अन्तर से और बाद में एक वर्ष में एक बार किया जाना चाहिये। यदि उसमें कोई लक्षण या उपद्रव पैदा न हों तो लूप को तीन वर्ष बाद बदल देना चाहिये।

**प्रवेशकाल**—लूप का प्रवेश आर्तवस्त्राव (Mens) के बन्द होने के बाद एक सप्ताह के अन्दर तथा प्रसवोपरान्त 6 से 8 सप्ताह के बाद करना चाहिये। गर्भपात के अन्तर जब प्रथम बार आर्तवस्त्राव हो तब लूप लगावें।

**निषेध**—लूप का प्रवेश गर्भावस्था, शोणिगत सक्रमण, योनिशोथ, गर्भाशयार्द्द, अनियमित रक्तस्राव और गर्भाशयिक अर्श की दशा में नहीं करना चाहिए।

**कामुकता**—लूप का कार्य संदिग्ध है। फिर भी यह माना जाता है कि लूप द्वारा—(1) शुक्राणुओं का उधर्वगमन रोकना,

(2) बीजवाहिनी में गतिशीलता बढ़ जाने से डिम्बाणु का निष्कासन करना,

(3) डिम्बाणु को गमित करने से रोकना,

(4) गमित बीज (Fertilized ovum) का गर्भाशय में वपन होने में वाधा डालना। आजकल इसी सिद्धांत को अधिक मान्यता दी जा रही है।

**लाभ**—1. यह केवल एक बार प्रयुक्त होता है, 1. आसानी से प्रविष्ट किया जा सकता है और निकाला जा सकता है, 3. सस्ता उपकरण है, 4. दम्पति के यौन-जीवन में इसके प्रवेश से कोई वाधा नहीं आती, 5. स्त्री में वन्ध्यात्व नहीं आता।

**हानियां**—1. रक्तस्राव (असुखदर और आर्तवस्त्रावोत्तर रक्तस्राव)—आरम्भ के कुछ आर्तवचकों तक अधिक मात्रा में आर्तव रक्त निकलता है। फिर स्वतः कम हो जाता है। यह उपद्रव बहुत साधारण है और 20 प्रतिशत स्त्रियों में मिलता है। 2. शोणिप्रदेश में तीव्र वेदना (Pelvic Pain) और अकड़न। 3. योनिस्राव बढ़ जाना।

4. शोणिगत शोथ (Pelvic Inflammation) कुछ स्त्रियों में गर्भाशयशोथ (Metritis and Endometritis) मिलता है। गर्भाशयार्द्द की उत्पत्ति में यह कारण नहीं बनता। 5. ऐंठन जैसा दर्द और कटिशूल। 6. मानसिक अस्वस्थता। 7. पुष्प को मैथुनकाकाल में नाइलोन के धागे के कारण क्वचित् असह्यता प्रतीत होती है। 8. अवसाद (Shock)। 9. रक्ताल्पता (Anaemia)।

इन उपद्रवों के कारण 10 प्रतिशत स्त्रियों में लूप निकाल देने की आवश्यकता पड़ती है। लूप-प्रवेश का सबसे अधिक गम्भीर उपद्रव गर्भाशय का विदीर्ण होना है। कभी इसके कारण कोई लक्षण पैदा नहीं होते, परन्तु क्षक्तिरण-परीक्षण से इसका निष्चय हो जाता है। उपद्रवों की लाक्षणिक चिकित्सा करनी चाहिए।

कभी-कभी लूप (प्रायः लूप छाटा होने पर) असफल रहता है और गर्भधारणा हो जाती है परन्तु लूप के कारण भ्रूण के विकास पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता।

लूप के कारण स्त्री की भविष्य की गर्भधारणा-क्षमता पर भी कोई परिणाम नहीं होता।

लूप का प्रयोग निर्धन, अशिक्षित और सावनहीन लोगों के लिये बहुत उपयोगी प्रमाणित हुआ है। यदि कोई उपद्रव न हो तो लूप को 1 वर्ष तक गर्भाशय के भीतर रखना चाहिए, फिर निकालकर दूसरा प्रविष्ट करना चाहिए।

**9. औषध प्रयोग—संततिनिग्रह हेतु औषधियां दो रूप में प्रयुक्त की जाती हैं—**

1. बाह्य
2. आम्यंतर

[प्र] **बाह्यप्रयोगार्थ औषध तथा रासायनिक विधियां** [Chemical Contraceptives]

ये शुक्राणुनाशक रासायनिक और औषध द्रव्य होते हैं, जिनका प्रयोग जैली, क्रीम मलहर, विलयशील पैसरी और भाग करने वाली गोलियों के रूप में योनि के भीतर किया जाता है। इनके द्वारा शुक्राणु फिल्क्रिय [Immobilised] और नष्ट किए जाते हैं। इन वस्तुओं का प्रयोग अन्य यान्त्रिक विधियों, जैसे डच कैप, चैक पैसरी, स्पंज के साथ किया जाना चाहिए, अन्यथा इनकी कामुकता संदिग्ध रहती है। जैली, पेस्टी और क्रीम को भीतर गर्भाशयमुख तक पहुंचाने के लिये लम्बी नलिकायुक्त ट्यूब आती है। भाग देने वाली गोलियों को प्रथम जल में डालकर उससे भाग उठने की स्थिति का परीक्षण कर लेवें। फिटकरी और स्टार्च को समान मात्रा में लेकर चालीस गुने ग्लिसरीन में मिलाकर जैली बनाकर योनि में प्रयोग किया जा सकता है।

**प्राचीनकाल** में योनि में पान का रस या मधु ढालने का प्रचलन था। इससे शुक्राणु गतिहीन और नष्ट हो जाते हैं। कुनैन का चूर्ण उत्तम शुक्राणुनाशक है। इसे मैथुन से दो-तीन मिनट पहले योनि में छिड़क दिया जाता है। कुनैन के अनेक रूप मिलते हैं—कुनैन सल्फेट, कुनैन हाइड्रोक्लोराइड आदि। इसी प्रकार फिटकरी का चूर्ण भी योनि में व्यवहार किया जाता है।

कुनैन के शोषित होने से कोमल प्रकृति वाली स्त्रियों में सिर में चक्कर आता, कानों में भनभनाहट होना, शरीर में गर्भी मालूम होना, भूख न लगना, नींद न आना, आदि विषाक्त लक्षण हो जाते हैं। योनि में कुनैन से दाह और सूजन हो जाती है। तब इसका प्रयोग बन्द कर देना चाहिए। फिटकरी के प्रयोग में विषैलै लक्षण नहीं होते तथा योनिमार्ग का संकोचन भी हो जाता है। इसलिये बहुप्रसवा में योनि की शिथिलता में लाभ पहुंचता है।

इसके अतिरिक्त जैतुन का तैल, सरसों का तैल, तिल का तैल, कपास-बीजतैल या नीम के बीज का तैल भी योनि में प्रयोग किया जाता है। इसे रुई या स्पंज के साथ या नीम के बीज का तैल भी योनि में प्रयोग किया जाता है। नीम का तैल उत्तम शुक्राणुनाशक है। आजकल गंधरहित व्यवहार किया जाता है। नीम का तैल भी उपलब्ध होता है। कुछ पेटेन्ट तैल भी बाजार में मिलते हैं। परन्तु इनका प्रयोग सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

कुनैन और फिटकरी को अलग से अथवा मिलित रूप से घोल बनाकर भी योनि

में प्रयोग करते हैं। कुनैन को तीन औंस जल में 12 ग्रेन और फिटकरी को 4 औंस जल में 60 ग्रेन की मात्रा में जल में मिलाया जाता है। लाइसोल का धोल भी शुक्राणुनाश करता है। लैबिटिक एसिड, सिरका (विनेगार या एसिटिक एसिड) और नींबू के रस (साइट्रिक एसिड) का धोल भी योनि में प्रयुक्त किया जाता है। इन द्रवों का स्पंज के साथ व्यवहार होता है। साथ ही इसके द्वारा योनिप्रक्षालन भी किया जाता है।

कुनैन आदि से बनी विलयनशील पैसरीज (चूड़ियां) भी प्रयुक्त होती है। मैथुन से आधे घण्टे पहले इसको योनि में धारण कर लिया जाता है। धीरे-धीरे यह पिघलकर द्रवस्वरूप बन जाती है। वह द्रव योनि और गर्भाशय के मुख पर लिप्त हो जाता है। चुनून शुक्राणुओं पर यह द्रव धातक प्रभाव करता है। इससे गर्भधारणा नहीं हो पाता।

पंजाब की फार्मेसियां इसके लिये एक प्रकार की टिकियां बनाती हैं। इसका योग निम्नलिखित है—माजूफल, लवंग, स्फटिका, कत्था सिनिकोना और अतीस। इनको समभाग में मिला चूर्णकर, इन्द्रायणी-क्वाथ और त्रायमाण-क्वाथ की 3-3 भावनाएं दें। पश्चात् 2-2 रत्ती की टिकियां बनाले। मैथुन से पूर्व इनको योनि में धारण करने से गर्भ नहीं रहता।

#### (आ) मख द्वारा आम्यंतर औषधि-प्रयोग (Oral Contraceptives)

प्रोजेस्टोजन (Progesterones) और इस्ट्रोजन (Oestrogen) संज्ञक अन्तःस्नावों का यदि स्त्री मुखमार्ग से सेवन करती है तो प्रभावशाली गर्भनिरोधक प्रमाणित होते हैं। इससे निर्मित योग मुखमार्ग से लिये जाने पर अच्छा कार्य करते हैं। ये सक्रिय कृत्रिम प्रोजेस्टोजन्स में से किसी एक से एवं दो कृत्रिम इस्ट्रोजन्स (एथिनिल इस्ट्रोडियल और मेस्ट्रानोल (Ethynodiol and mestranol) में से किसी एक से बने होते हैं। इनके मिश्रण की गोलियां मिलती हैं।

इस्ट्रोजन-प्रोजेस्टोजन की मिश्रित गोली को प्रत्येक माह में आर्तवस्नाव प्रारम्भ होने के पांचवें दिन (20 या 21 गोली के कोर्स हेतु) अथवा चौथे दिन (22 गोलियों के कोर्स हेतु) से प्रारम्भ करते हैं। प्रतिदिन रात्रि में सोते समय 1 गोली मुखमार्ग से सेवन करानी होती है।

ये औषधें डिम्बग्रन्थि में डिम्बाणु के परिपाक को रोकती हैं तथा गर्भाशय में वपन किया नहीं होने देती।

**आयुर्वेदिक योग—** आयुर्वेदिय ग्रन्थों में गर्भनिरोध के लिये आम्यंतर सेवनीय अनेक योग मिलते हैं—

(1) पिप्पली, वायविडंग और टंकण को समान भाग में लेकर, 2 माशा की मात्रा में दुग्धानुपान से रजःस्नाव के समय स्त्री सेवन करें। उससे गर्भ नहीं रहेगा।

पिप्पलीविडंगटंकणमचूर्णं या पिवेत् पयसा।

कृतुममये न हितस्याः गर्भं सञ्जायते क्वापि ॥

(2) कृतुकाल में कांजी के साथ जपा [गुडहल] के फूलों को पीसकर पुराना गुड़ मिलाकर सेवन करने से स्त्री गर्भवती नहीं होती। [इसे आर्तवस्नावकाल में सेवन करना चाहिये।

(3) तीन वर्ष पुराना गुड़ दो से चार तोले की मात्रा में स्त्री कृतुकाल में 15 दिनों तक सेवन करें।

(4) चित्रक की जड़ को चांवल के तुष के क्वाथ के साथ रजःस्वला होने के बाद स्त्री तीन दिन पीये तो वह वंध्या हो जाती है।

तुषतोयेन संक्वाथ्य मूलमग्नितरूदभवम् ।

पुष्पावसाने त्रिदिनं पीत्वा वध्यापि जायते ॥

(5) चन्दन, सरसों और शक्कर समान भाग लेकर चांवल के धोवन के साथ पीने से स्त्री वंध्या हो जाती है।

(6) पाठा के पत्र के चूर्ण को कृतुस्ताता स्त्री खाकर जल पी लेवे, इसके बाद उसे उस मास में गर्भधारणा नहीं होती।

(7) राई को तिलतैल के साथ पीसकर कृतुकाल में तीन दिन तक पीने से स्त्री को गर्भधारणा नहीं होती।

(8) जायफल और तीन वर्ष पुराना गुड़ समभाग मिलाकर पन्द्रह दिनों तक खाने से स्त्री ग्राजीवन वंध्या हो जाती है।

(9) कृतुकाल के 16 दिनों में से प्रथम छः दिनों में प्रतिदिन हल्दी की एक गांठ खाने से स्त्री वंध्या हो जाती है।

(10) पान के पीछे की 10 ग्राम जड़ के साथ ढाई गोलमिर्च पीसकर कृतुस्तान के बाद खाने से गर्भधारणा नहीं होती।

(11) तालीसपत्र और गैरिक का चूर्ण 10 ग्राम मात्रा में लेकर शीतल जल के साथ आर्तवस्नाव के बाद चौथे दिन पीने से स्त्री वंध्या हो जाती है।

(12) चौलाई की जड़ को चांवल के धोवन के साथ पीसकर आर्तवस्नाव बन्द होने के बाद तीन दिन तक पीने से स्त्री वंध्या हो जाती है।

(13) आर्तवस्नाव [मासिकधर्म] प्रारम्भ होने के बाद सात दिनों तक प्रतिदिन 1 लौंग खाने से और इस तरह तीन मासिकधर्म तक सेवन करने से स्त्री वंध्या हो जाती है।

(14) पलाश (ढाक) के बीजों को जलाकर उसकी राख [कोयले] के साथ हींग मिलाकर दूध के अनुपान से पीने से गर्भधारणा नहीं होती है।

(15) आमला, अर्जुन और हरड़ के समभाग चूर्ण को जलानुपान से पीवे।

(16) इसी प्रकार मैषज्यरत्नावली में एक अन्य योग इस प्रकार दिया गया है। रसांजनन् हैमवती वयस्य, चूर्णकृतं शीतजलेन पीतम् ।

रजोविनाशं नियं करोति शंकाऽत्र का गर्भसमागमस्थ ॥

(17) सम्भालु [निर्गुडी] के बीज को 4 ग्राम की मात्रा में जलानुपान से 2 से 3 माह तक सेवन करें। इससे स्त्री की सदैव के लिये गर्भधारणा-शक्ति समाप्त हो जाती है।

(18) नीचे किसी हकीम द्वारा निर्दिष्ट योग बताया जा रहा है-एक छटांक श्वेतांजन को एक पाव भेड़ के दूध में खूब घोटें। फिर टिकिया बना, सुखाकर संपुट में बन्द करें, इसे उप्पलों की मंदाग्नि दें। इस प्रकार तीन पुटों से उसकी भस्म बनायें। पश्चात् पीस कर रख लें। इसमें से 1 रत्ती की मात्रा क्रृतुस्नाना स्त्री को दूध के साथ पिला दें। कहा जाता है कि इसका जितने दिन प्रयोग किया जायगा, उतने ही मास गर्भनिरोध रहेगा।

(19) वराटिका-भस्म या प्रवालभस्म को समभाग शर्करा मिलाकर सेवन करें।

(20) फिटकरी का चूर्ण 2 ग्राम, पुराना गुड़ 10-20 ग्राम के साथ खाने से भी गर्भनिरोध होता है।

(21) पोदीने का चूर्ण तुलसीपत्रकवाथ से पीयें।

(22) हमारे एक मित्र ने हस्तशक्तरस  $1\frac{1}{2}$  तोले की मात्रा में प्रतिदिन प्रातः-काल एक बार, क्रृतुस्नान के बाद तीन या पांच दिन प्रयोग कर निरापद रूप से कई स्त्रियों में गर्भधारणावरोध उत्पन्न कराया है। वस्तुतः यह प्रयोग वैज्ञानिकरीत्या परीक्षणीय है।

कुछ तान्त्रिक विधियां भी ग्रन्थों में वर्णित हैं।

(10) **गर्भपात [Abortion]**—ग्रन्थ भारत सरकार ने संतति-निग्रह हेतु दम्पति के परामर्श से गर्भपात कराना वैध घोषित कर दिया है।<sup>1</sup> तीन प्रकार से गर्भपात कराया जाता है।

[1] शास्त्रकर्म द्वारा

[2] छुत्रिम दाब द्वारा गर्भाशय की मांसपेशियों को संकुचित कराकर।

[3] ग्रोषधि-प्रयोग द्वारा—ये ग्रोषधियां गर्भाशय की मांसपेशियों का संकोचन करती हैं, रक्तस्राव करती हैं।

(11) **शास्त्रकर्म**—[वन्ध्याकरण Sterilization]-अभी तक ऊपर जिन विधियों का उल्लेख किया गया है, वे सब अस्थायी गर्भनिरोधक होती हैं, परन्तु शास्त्रकर्म द्वारा स्त्री और पुरुष में स्थायी वन्ध्यात्व [Permanent Sterility] उत्पन्न की जाती है।

<sup>1</sup> इस ग्रन्थ का कानून जिसे 'चिकित्सक की सहायता से गर्भ-समाप्ति का अधिनियम' [Medical Termination of Pregnancy Act] कहते हैं, अप्रैल 1972 से लागू कर दिया गया है।

आधुनिक चिकित्साशास्त्र में यह संततिनिग्रह की विश्वसनीय विधि मानी गयी है।

निम्न परिस्थितियों में शस्त्रकर्म वन्ध्याकरण द्वारा किया जाना अनिवार्य होता है-

[1] स्त्री में बस्तिगह्वर के कारण प्रतिवार प्रसव के समय उदरपाठन करना पड़ता हो।

[2] स्त्री में यदि किसी कारण से श्रोणिभूमि [Pelvic Floor] का शस्त्रकर्म द्वारा संयोजन किया गया हो।

[3] स्त्री या पुरुष हृदयरोग, उच्चरक्तदाव, मानसिक रोग आदि से पीड़ित हो।

[4] निर्वन्तता के कारण दम्पति अन्य गर्भ निरोधक उपायों और साधनों का प्रयोग करने में असमर्थ हो।

जिस दम्पति के 2-3 जीवित बच्चे हो, स्त्री की आयु 25 वर्ष से अधिक तथा पुरुष की आयु 30 वर्ष से अधिक हो तथा उनका यौन-मनोवैज्ञानिक विकास समुचित हुआ हो, उनमें देश की वर्तमान आवश्यकता को ध्यान में रखकर शस्त्रकर्म द्वारा वन्ध्याकरण किया जाना आवश्यक है।

विधियां—पुरुष और स्त्री में यह क्रिया भिन्न-भिन्न तरीके से की जाती है।

[1] पुरुषों के लिये वन्ध्याकरण (Male Sterilization or Vasectomy) स्थानिक संज्ञाहरण करके शस्त्रकर्म द्वारा दोनों शुक्रवाहिनियों (Vasdefens) का बंधन [Ligaturing] और उच्छेद कर दिया जाता है। इसमें खतरा अत्यल्प होता है।

[2] स्त्रियों के लिये वन्ध्याकरण (Female Sterilizations or Tubectomy) स्त्रियों में शस्त्रकर्म द्वारा दोनों बीजवाहिनियों का बन्धन और उच्छेद कर दिया जाता है। इसकी दो विधियां हैं—

[अ] योनिमार्ग से शस्त्रकर्म [Vaginal Method]—इसके भी दो विधान हैं-प्रथम योनिमार्ग से गर्भाशय-बस्ति गुहा [Uterovesical Pouch] में से गर्भाशय तथा बीजवाहिनियों को बाहर लाकर वाहिनियों का बंधन और उच्छेद किया जाता है। द्वितीय, डगलस गुहा (गर्भाशय-मलाशय गुहा) में से योनिमार्ग से गर्भाशय और बीजवाहिनियों को बाहर निकालकर, बीजवाहिनियों का बन्धन और उच्छेद किया जाता है। यह वर्तमान में भारत में बहुत लोकप्रिय और प्रचलित है। यह अधिक सुविधाजनक मानी गई है।

[आ] उदरमार्ग से शस्त्रकर्म—मध्यरेखा पर अथवा भग्संवि के ऊपर भेदन (Incision) द्वारा उदरपाठन (Laparotomy) करके बीजवाहिनियों का बन्धन अथवा उच्छेद (Tubal Ligation or Salpingectomy) किया जाता है।

इसके दो प्रकार हैं—

[अ] मेडलेनर विधि (Madelner Method) में बीजवाहिनी के पाश (Loop) को कुचल दिया जाता है (Crushed) और रेशम के धागे से बांध दिया जाता है।

[आ] पोमेराय विधि (Pomeroy Method) में वानिनी-पाश को वाहिनी के मध्य

भाग में ऊपर उठाया जाता है और पाश के दोनों सिरों को क्रमिक केटगट द्वारा बांध देते हैं। इसके पाश को मध्य में काट दिया जाता है।

गर्भाशय-च्छेदन (Uterectomy) का शस्त्रकर्म भी किया जाता है। परन्तु यह बहुत गम्भीर शस्त्रकर्म है।

#### शस्त्रकर्म की विश्वसनीयता-

पुरुषों में किये जाने वाले शुक्रवाहिनी उच्छेद (Vasectomy operation) का शस्त्रकर्म कभी-कभी असफल रहता है। इसका कारण गलती से पूरा बन्धन व उच्छेद नहीं हो पाना अथवा शस्त्रकर्म के बाद एक या दो माह के भीतर ही मैथुनक्रिया करना है। स्त्रियों में किया जाने वाला बीजवाहिनी-उच्छेद (Salpingectomy) शस्त्रकर्म क्वचित् ही असफल होता है।

#### गर्भनिरोधक विधि का चयन

दम्पति की आर्थिक, शारीरिक, मानसिक और बाह्य परिस्थितियों पर गर्भनिरोधक विधि का चुनाव निर्भर करता है। फिर भी जैफकोट के निर्देशानुसार निम्नांकित में से कोई एक प्रयोग अधिक साधारण, विश्वसनीय और हानिरहित है।

[ 1 ] शिश्नावरणिका टोपी ] कण्डोम या अमेरिकन टिप ] + शुक्राणुनाशक जेली या सपोजिटरी [ वर्ति ] ।

[ 2 ] अवरोधक टोपी (चैकपैसरी, डचकैप) + शुक्राणुनाशक जेली ।



## अध्याय-21

# स्त्रीरोगों में स्थानिक औषधि-प्रयोग की विधियाँ

### उत्तरबस्ति

आयुर्वेद-शास्त्र में 'उत्तरबस्ति' शब्द का व्यवहार दो अर्थों में हुआ है; प्रथम, उत्तरमार्ग से दी जाने के कारण उत्तरबस्ति कहते हैं, तथा द्वितीय, उत्तर अर्थात् श्रेष्ठ गुण वाली वस्ति होने से उत्तरबस्ति कहलाती है। (उत्तरबस्तिसंज्ञा उत्तरमार्गदीयमा नतया किंवा श्रेष्ठगुणतया उत्तरबस्तिः, चक्रपाणिकृतटीका, च.सि. 9/50 पर)। वृद्ध-वाग्मट में 'उत्तर' शब्द से निरूहण के बाद ऐसा अर्थ भी प्रहण किया है। [ म निरूहादुत्तरमुत्तरेण वा मार्गेण दीयत इत्युत्तरबस्तिः; अ.सं सू 28/9]। उत्तर-मार्ग शब्द गुदा से उपरितन मार्ग-छिद्र के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। पुरुषों और स्त्रियों में मूत्रमार्ग तथा स्त्रियों में अपत्यमार्ग [योनि-गर्भाशय] को 'उत्तरमार्ग' संज्ञा से संबोधित किया जाता है। चरकसंहिता में सिद्धिस्थान का 12वां अध्याय 'उत्तरबस्तिसिद्धि' नामक है। परन्तु उसमें जिन वस्तियों का वर्णन किया गया है, वे मूत्रमार्ग और अपत्यमार्ग से दी जाने वाली वस्तियां नहीं हैं अपितु गुदमार्ग से पवाशय में दी जाने वाली उत्तम-श्रेष्ठ वस्तियां हैं। परंतु परवर्तीकाल से उत्तरबस्ति संज्ञा उत्तरमार्ग-मूत्रमार्ग और योनिमार्ग से दी जाने वाली वस्ति के अर्थ में अर्थात् मूत्राशयगत और गर्भाशयगत वस्ति के अर्थ में योगहृद हो गई।

**उपकरण—**वस्ति देने के लिये मार्ग में प्रवेशयोग्य नलिका और उससे जुड़ा हुआ द्रव भरने के लिये पुटक लिया जाता है। नलिका की 'नेत्र' और पुटक की 'वस्ति' या 'वस्तिपुटक' यह पारिभाषिक संज्ञा है। उत्तरबस्तिनेत्र को 'पुष्पनेत्र' भी कहते हैं। क्योंकि उत्तरबस्ति का अधिकतर प्रयोग स्त्रियों के गर्भाशय और रज की विकृतियों में किया जाता है। 'रज' को 'पुष्प' भी कहते हैं, प्रतः उत्तरबस्तिनेत्र को 'पुष्पनेत्र' कहने का प्रचलन है। परन्तु इसमें यह नहीं समझना चाहिये कि केवल स्त्रियों व्यवहृत होने वाले नेत्र की पुष्पनेत्र संज्ञा है, अपितु पुरुषों में प्रयुक्त होने वाले उत्तरबस्ति नेत्र को भी 'पुष्पनेत्र' ही कहते हैं।

**नेत्र—**का आकार और लम्बाई लिंग, आयु और प्रयुक्त किये जाने वाले अंग के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। यहां केवल स्त्रियों के अभिप्राय से उत्तरबस्ति-विधान का वर्णन करेंगे। चरक और सुश्रुत के अनुसार उत्तरबस्ति-नेत्र की लम्बाई 10 अंगुल और मोटाई मूत्रवहस्त्रोत के परिणाह (विस्तृति-घेरा) के समान होनी चाहिये। इसका छिद्र मूँग के प्रवेशयोग्य बड़ा होना चाहिये। इसके मध्य में 4 अंगुल पर 'कर्णिका' (उत्सेध व बंधनस्थान) होना चाहिये।

<sup>1</sup> पुष्पनेत्रभित्युत्तरबस्तिनेत्रस्य संज्ञा—च.सि. 9/50 पर चक्रपाणि।

<sup>2</sup> सु.सू. 7/13 पर इसकी 'नाड़ीयंत्रों' में गणना की गई है। डह्लण—'उत्तरबस्तिनेत्रं द्विविधं पुंसां स्त्रीणां च, एके त्रिविधमादुः।' हाराणवन्द्र-उत्तरबस्तियंत्राणि पुंसां द्वे



हीनबल रोग में सब वय और अवस्थाओं में उत्तम प्रमाण से 'न्यून', 'मध्य' और 'हीन' मात्रा की कल्पना अपनी बुद्धि से करनी चाहिये ।<sup>10</sup>

स्नेहबस्ति का प्रायोजन यदि गर्भाशय की शुद्धि करना हो तो इससे दुगुनी मात्रा प्रयोग करनी चाहिये ।<sup>11</sup>

शाङ्खधर ने स्त्रियों के योनिमार्ग (गर्भाशय) में प्रयोग करने योग्य स्नेह की मात्रा दो पल की (8 तोला), मूत्रमार्ग में प्रयोग के लिये 1 पल की तथा वालिकामणों में 2 कर्ष की कही है ।<sup>12</sup>

(2) निरुह-उत्तरबस्ति—पुरुष में उत्तरबस्ति हेतु बवाथ की मात्रा 1 प्रसृत (अपने वय और हाथ के अनुसार अंजलि-प्रमाण) होनी चाहिये । बड़ी स्त्रियों (प्रसृता में अथवा अप्रसृता में, गर्भग्रहण में अयोग्य हो) दो प्रसृत (16 तोला) बवाथ लेना चाहिये । परन्तु कन्या (बारह वर्ष से न्यून वय वाली) में अपनी हथेली के बराबर । प्रसृत (8 तोला) प्रमाण बस्ति शोधनार्थ प्रयोग की जानी चाहिये, उनमें गर्भाशय का शोधन करना अपेक्षित नहीं होने से 2 प्रसृत मात्रा प्रयोग नहीं होती ।<sup>13</sup>

उत्तरबस्ति देने का काल—स्त्रियों के अपत्यमार्ग में उत्तरबस्ति देने का विशेष समय होता है, मूत्रमार्ग में तो कभी भी उत्तरबस्ति दी जा सकती है ।

10 'स्नेहस्य प्रसृतं चात्र स्वाङ्गुलीमूलसंमितम् ।

देयं प्रमाणं परममर्वाग् बुद्धिविकल्पितम् ॥ (सु.चि. 37/106)

इस पर ड्हङ्गण की टीका भी देखें ।

विशेष-वैसे मूत्रमार्ग प्रवेशार्थ उत्तरबस्ति में स्नेह की उत्तम (अधिकतम) मात्रा मुश्तुत ने प्रकुञ्च (1 पल=4 तोला) वतायी है । यह मात्रा पच्चीस वर्ष वय वाले या, अधिक वय वाले स्त्री-पुरुषों के लिए है । पच्चीस से कम आयु वाले व्यक्तियों के लिए कम मात्रा देनी चाहिये ।

ड्हङ्गण ने कम मात्रा का वयानुसार उल्लेख इस प्रकार किया है—1 वर्ष के बालक के लिए उत्तम मात्रा (4 तोला) का पच्चीसवां भाग प्रयुक्त करना चाहिये, फिर प्रति वर्ष पच्चीसवां भाग बढ़ाकर, 25 वर्ष में 4 कर्ष (तोला) मात्रा प्रयुक्त करनी चाहिये ।

11 गर्भाशयविशुद्ध्यर्थं स्नेहेन द्विगुणेन तु ॥ (सु.चि. 37/116)

12 योनिमार्गेषु नारीणां स्नेहमात्रा द्विपालिकी ।

मूत्रमार्ग पलोन्मानां बालानां च द्विकाषिकी ॥ [शा.उ. 7/9]

13 बवाथप्रमाणं प्रसृतं, स्त्रिया द्विप्रसृतं भवेत् ।  
कन्येतरस्याः, कन्यायास्तद्वस्तिप्रमाणकम् ॥ [सु.चि. 37/116-117]

ड्हङ्गण—कन्येतरस्या अप्रसृतामा प्रसृताया वा गर्भग्रहणायोग्यायाः । कन्याया अप्राप्तद्वादशवर्षयाः । तद्विदिति पुरुषवद् यथावयःस्वहस्तास्मितं प्रसृतं प्रमाणा बस्ति विशोधनार्थं, न तु द्विप्रसृतं तस्य गर्भाशयशोधनार्थं विहितत्वादिति ।

स्त्रियों में आर्तवकाल [आर्तवभ्राव के अनन्तर 12 या 16 रात्रियों का ऋतुकाल यहां अभिप्रेत है] में उत्तरबस्ति देनी चाहिये, क्योंकि उस समय गर्भाशय में स्रवित रज का आवरण दूर हुग्रा रहता है । बस्तिप्रयोग से वातु का शमन हो जाने से योनि [गर्भाशय] में शीघ्र ही गर्भ का घारणा हो जाता है । 1. बस्तिगत विकार, 2. योनिविभ्रंश से होने वाले विकार, 3. तीव्र योनिशून, 4. योनिव्याप्त, 5. अमृदर, 6. मूत्र का अवरोध, 7. मूत्र का बूँद-बूँद निकलना-इन मूत्र-प्रजनन संस्थान सम्बन्धी विकारों में यास्व [दोपानुसार] औषधियों से साधित उत्तरबस्ति वा प्रयोग करना चाहिये ।<sup>14</sup>

सुश्रुत के अनुसार उत्तरबस्ति-दुष्ट शुक्र, दुष्ट आर्तव, पुष्पोद्रेक, [पुष्प=रज की प्रकालप्रवृत्ति अर्थात् अमृदर], पुष्पताश [अनातर्व], नष्टार्तव, प्रवृद्ध मूत्राधात [मूत्रा वरोध] और मूत्रदोष [मूत्रकृच्छ], योनिरोग, अपरा का न निकलना, शुक्रोत्सेक, शर्करा, अश्मरी, बस्तिवंकण-मेहन में शूल, अन्य बस्तिगत धोर रोगों [मेहरोगों को छोड़कर] को नष्ट करती है ।<sup>15</sup>

प्रयोग-विधान—पूर्वकम्—1. मलमूत्र का त्याग करना, 2. स्नान, 3. दूध पौर वी अथवा मांसरस के साथ यवागू पिलाना, 4. स्थानिक स्नेहन (ग्रन्थंग) और स्वेदन ।<sup>16</sup>

14 स्त्रीणामार्तवकाले तु प्रतिकम् तदाचरेत् ।

गर्भसिना सुखं स्नेहं तदाऽदत्ते ह्यपावृता ॥

गर्भ योनिस्तदा शीघ्रं जिते गृह्वाति मास्ते ।

बस्तिजेषु विकारेषु योनिभ्रंशजेषु च ।

योनिशूलेषु तीव्रेषु योनिव्याप्तस्वसृदरे ।

अप्रस्ववति मूत्रे च विन्दुं विन्दुं स्वत्यपि ।

विदध्यादुत्तरं बस्तिं यथास्वौषधसंस्कृतम् । [च.सि. 9/52-55]

चक्रः—गर्भसिना गर्भाशया, गर्भाशय इत्यर्थः; अन्ये तु योनिमाहुः । आदत इति सम्भृ गृह्णाति । अपावृत्तेति अपगतसंचितरजोरूपावरणा ।

15 शुक्रं दुष्टं शोणितं चांगनानां पुष्पोद्रेकं तस्य नाशं च कष्टम् ॥

मूत्राधातान् मूत्रदोषान् प्रवृद्धान् योनिव्याधिं संस्थिति चापराणाम् ॥

शुक्रोत्सेकं शर्करामश्मरीं च शूलं वस्तौ वंशणे मेहने च ।

घोरानम्यान् बस्तिजांश्चापि रोगान् हित्वा मेहानुतरो हंति बस्तिः ॥

[सु.चि. 37/135-136]

ड्हङ्गण-पुष्पं ऋतुस्तस्योद्रेकोऽकालप्रवृत्तिः, कष्टं कष्टसाध्यम् । ×× संस्थिति निर्गमरोधमित्यर्थः । अपरा गर्भविरण विशेषः, यस्या 'उल्ब' इति लोके प्रसिद्धिः ।

15 'स्नातस्य भुक्तमभक्तस्य रसेन पयसाऽपि वा ।

सृष्टविष्णमूत्रवेगस्य .... .... ॥

[च.सि. 9/53-54]\*

**प्रधानकर्म**—स्त्री को उत्तन सुलाकर, दोनों पैरों को सिकोड़कर, जानुओं को ऊंचाकर पृष्ठवंश की ओर मुख रखते हुए पुष्पनेत्र को सुखपूर्वक (बीना पीड़ा के) योनि या मूत्रमार्ग में प्रविष्ट करना चाहिए। धीरे-धीरे एक साथ बस्ति दबानी चाहिये।

**दिन**—रात में तीन या चार बार बस्ति में स्नेह का प्रयोग करना चाहिये।

**पश्चातकर्म**—18 स्नेह के लौट आने पर 'आनुवासिक विधि' का प्रयोग करना चाहिये। उसी के समान (अनुवासन बस्ति के समान) परिहार, व्यापत्तिया, सम्यक्दत्त के लक्षण समझना चाहिये। बस्तिस्नेह के लौट आने पर अपरान्ह में दूध, यूप और मांसरस के साथ भोजन देवें। यदि उत्तरबस्ति का स्नेह बाहर न निकले तो उसे निकलने के लिए वर्ति (च. सि. 9/58-61) मोटी बनानी चाहिये।

सुश्रुत ने लिखा है उत्तरबस्ति के बापस न लौटने पर पुनः 1. शोधनगण (संशोधन त्रिवृतादिगण तथा बस्तिशोधन-तृणपंचमूलादिगण) के क्वाथ से निरुह उत्तरबस्ति देवें। मूत्रमार्ग में इसकी मात्रा 'प्रसृति' (8 तोला) तथा स्त्रियों के अपत्यमार्ग के दो प्रसृति (16 तोला) दी जाय, इससे स्नेह का आकर्षण होता है, 2. शोधनद्रव्यों (विरेचन करने वाले द्रव्यों) से निर्मित वर्ति गुदा में (तथा योनि में) लगावें। 3. एषणीशलाका यन्त्र को बस्तिद्वार (तथा गर्भाण्यद्वार) में प्रवेश करावें। 4. नाभि के नीचे मुट्ठी के अग्रभाग से पीड़न करें।<sup>19</sup>

**अन्य बस्तियां**—स्नेह की मात्रा बढ़ाते हुए तीन दिन तक उत्तरबस्ति का प्रयोग करना चाहिये। फिर तीन दिन ठहरकर पुनः तीन दिन तक इसी विधि से स्नेह को बढ़ाते हुए उत्तरबस्ति देनी चाहिये।<sup>20</sup>

**ड्लेण**—के अनुसार स्नेह के लौट आने पर उसी दिन कुछ समय के अन्तर से तीन या चार बार, मात्रा बढ़ाते हुए स्नेह दिया जाना चाहिये। इस प्रकार तीन दिन तक स्नेहिक उत्तरबस्ति देने पर तीन दिन तक विश्राम कर पुनः तीन दिन तक उत्तरबस्ति प्रयुक्त करें। ऐसा तब तक करते रहें जब तक व्याधिनिवृत्ति नहीं हो जाती।<sup>21</sup>

\*अथातुरमुपस्निग्धं स्विन्नं प्रशिथिलाशयम् ।

यवाग् सघृतक्षीरां पीतवन्तं यथाबलम् ॥

स्वभग्वत्वस्तिमूर्धान् तैलेनोष्णेन मानवम् । (सु. चि. 37/108-10)

17-18-19-20 (अ) उत्तानायाः शयानायाः सम्यक् संकोच्य सविथनी ।

अथास्याः प्रणयेन्नेत्रमनुवंशगतं सुखम् ।

द्विस्त्रिश्चतुररिति स्नेहानहोरात्रेण योजयेत् ॥

बस्ती, बस्ती प्रणीते च वर्ति: पीनतारा भवेत् ॥

21 विराज कर्म कुर्वीत स्नेहमात्रां विवर्धयेत् ।

इनेनेव विधानेन कर्म कुर्वीत पुनस्त्र्यहात् ॥ (च. सि. 9/7-70)

अन्य विधिना दयात् बस्तीस्त्रीश्चतुरोऽपि वा ।

**वर्तियां**—उत्तरबस्ति के द्रव या स्नेह के पुनः आगमन के लिए निम्न वर्तियां बरती जायें।

1. **पिपल्यादिवर्ति** (च. सि. 9/58-61)—पिपली, अगर, आगारधूम (गृहधूम), अपामार्ग, सरसों, वार्ताकुरस (बैगन का रस), निर्गुण्डी, अमलताप, सहचर (भीण्डी)-इनको समझाग लेकर गोमूत्र और अम्लद्रव्यों के साथ पीसकर, गुड़ के साथ पकाकर गुड़पाक या सम्यक् लक्षण मिलने पर वर्ति बनावें। यह आगे की ओर सरसों जितनी तथा पीछे की ओर आवे भाग में उड़द जितनी मोटी तथा पुष्पनेत्र जितनी लम्बी होनी चाहिये। इसे धी से चुपड़ कर अमंगुर दशा में मूत्रताड़ी (मूत्रमार्ग) अथवा अपत्यमार्ग में उसी प्रकार प्रवेश करें जिस प्रकार पुष्पनेत्र का प्रवेश कराते हैं।

2. **आरग्वधादिवर्ति** (सु. चि. 37/120-121)—आरग्वध (अमलताप) के पत्तों के साथ सेंधानमक मिलाकर निर्गुण्डी के रस और गोमूत्र के साथ पीसकर वयानुसार मूँग, इलायची और सरसों जितनी मोटी वर्तियों को शलाका की सहायता से मूत्रमार्ग या अपत्यमार्ग में प्रवेश करायें।

उर्ध्वजान्वै स्त्रियै दद्यादुत्तानायै विचक्षणः ॥

सम्यक् प्रपीडयेद् योनि दद्यात् समृदुपीडितम् ।

त्रिकणिकेन नेत्रेण दद्याद्योनिमुखं प्रति ॥

**ड्लेण**—'प्रागदत्तस्नेहप्रत्यागमने कालान्तरितस्तदहरेव त्रिश्चतुर्वा मात्रां वर्धयित्वा स्नैहो देय, एवं त्रीणि दिनानि स्नेहिकमुत्तरबस्ति दत्वा त्र्यहमेव विश्रम्य पुनस्त्र्यहं दद्यादाद्याधिनिवृतेः ॥'

'बस्तीस्त्रिरात्रमेवं स्नेहमात्रां विवर्धयेत् ।

त्र्यहमेव च विश्रम्य प्रणिदध्यात् पुनस्त्र्यहम् ॥ (अ. ह. सू. 19)

(आ) स्नेहे प्रत्यागते ताभ्यामनुवासनिको विधिः ।

परिहारश्च सव्यापत् सम्यग्दत्तलक्षणः ॥ (च. सि. 9/61)

सुश्रुत ने भी लिखा है—‘सम्यग्दत्तस्य लिगानि व्यापदः क्रम एव च ।

बस्तेहत्तरसंज्ञस्य लिगानि समानं स्नेहबस्तिना ॥

(सु. चि. 37/127)

अनुवासन देने के पश्चात् करने योग्य सब कर्म स्नेहिकउत्तरबस्ति देने के बाद भी करें। जैसे—स्फक्ताडन, अंगमर्दन आदि तथा अनुवासनचिकित्सित करें।

बागमट ने लिखा है—

‘पीडितेऽन्तर्गते स्नेहे स्नेहबस्तिक्रमो हितः ।’ (अ. ह. सू. 19)

(इ) ततः प्रत्यागतस्नेहमपराह्णे विचक्षणः ।

भोजयेत् पयसा मात्रां युपेणाथ रसेन वा ॥ (सु. चि. 37/117)

ड्लेण पयोयूपरसैर्भोजनं कफपित्तवातपेक्षया ।

3. आगारधूमादिवर्ति [सु. चि. 37/122-123]—गृहधूम, बड़ी कटेरी, पीपल, मदन फल, सेंधानमक, सोंठ को समझाग लेकर शुक्त, गोमूत्र, सुरा के साथ पीसकर वर्ति बनावें। बस्ति में दाह होने पर— (ड़ह्लण के अनुसार स्नेह-तंत्र के प्रयोग से कुपित पित के निकलने से अथवा प्रयुक्त स्नेह को निकालने के लिये तीक्षण-उषणा निरूह देने से कुपित पित के कारण बस्ति में दाह उत्पन्न होता है।) 1. मुलेठी के ठंडे क्वाथ में शर्करा और मधु मिलाकर या 2. पंचक्षीरीवृक्षत्वकरपाय में शर्करा और मधु मिलाकर या 3. ठंडे दूध में शर्करा-मधु मिलाकर बस्ति देवें।<sup>22</sup>

स्नेह-प्रत्यागमन का काल—उत्तरबस्ति में दिया हुआ स्नेह कब तक लौट आना चाहिये? इसका निर्देश ड़ह्लण ने अपनी टीका में गयदास के विचार के आधार पर प्रस्तुत किया है। गयदास ने भालुकि के वचन को आधार मानकर 100 मात्राकाल के अनन्तर स्नेह का प्रत्यागमन होना स्वीकार किया है। दृढ़बल ने स्नेह न लौटने पर रजनी (रात्रि) भर तक प्रतीक्षा करना लिखा है। इन दोनों मतों में [भालुकि और दृढ़बल के] सामंजस्य करते हुए ड़ह्लण ने लिखा है कि एक सौ मात्रा के बाद भीतर रहकर यदि स्नेह उपद्रव करने लगे तो प्रयत्नपूर्वक उसे बाहर निकालना चाहिये, तब उसकी अनुवासन के समान तीन याम तक प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिये। परन्तु यदि बाहर न निकलता हुआ स्नेह उपद्रव न करे तो अहोरात्र तक प्रतीक्षा करनी चाहिये। इस प्रकार दोनों मतों को दो भिन्न अवस्थाओं में मानना चाहिये।<sup>23</sup>

'मात्रा' किसे कहते हैं? हथेली को घुटनों के चारों ओर घुमाकर एक चुटकी बजाने में जो समय लगता है, वह एक मात्रा है, ऐसा सर्वत्र मानना चाहिये।

'जानुमण्डलमावेष्ट्य कुर्याच्छ्रोटिक्या युतम् ।

एका मात्रा भवेदेषा सर्वत्रैष विनिश्चयः ॥ [शा उ. अ. 5/28]

योनिव्यापदों और आर्तवरों में उत्तरबस्ति का महत्व—

योनिव्यापदों की उत्पत्ति में वातदोष प्रधान है, तथा बस्ति वात का निमूँलन करने का श्रेष्ठ उपाय है।<sup>24</sup> अतः योनिव्यापदों में बस्ति एवं उत्तरबस्ति का बहुत महत्व स्वीकार किया गया है। वारभट ने लिखा है—

योनिव्यापत्सु भूयिष्टं शस्यते कर्म वातजित् ।

स्नेहस्वेदबस्त्यादि वातजासु विशेषतः ॥

न हि वाताद्वते योनिर्वनितानां प्रदुष्यति ।

अतो जित्वा तमन्यस्य कुर्यादोपस्य भेषजम् ।

(अ.ह.उ. 34/22-23)

'यच्च वातविकारणां कर्माक्तं तच्च कारयेत् ।

सर्वव्यापत्सु मतिमान् महायोन्यां विशेषतः ॥

<sup>23</sup> सु. चि. 37/123-124, उस पर ड़ह्लणटीका

<sup>24</sup> ड़ह्लणटीका, सु. चि. 37/124 पर

न हि वाताद्वते योनिर्वनितानां संप्रदुष्यति ।

शमयित्वा तमन्यस्य कुर्याददोषस्य भेषजम् ॥ [च.चि. 30/114-115]

'प्रतिदोषं तु साध्यासु स्नेहादिकम् इष्यते ।

द्यादुत्तरबस्तीश्च विशेषेण यथोदितान् ॥ [मु. चि. 37/11]

आर्तव की शुद्धि के लिये भी उत्तरबस्ति आवश्यक है—

'विधिमुत्तरबस्त्यन्तं कुर्यादार्तवशुद्धये ।

स्त्रीणां स्नेहादियुक्तानां चतसृष्वार्तवातिषु ॥

कुर्यात्कल्कान् पिच्चश्चापि पथ्यान्याचमनानि च ॥ [मु. शा. 2/12/13]

आर्तव—बीज और योनि के शुद्ध—रोगरहित होने पर स्त्री गर्भधारणा करती है।

'एवं योनिषु शुद्धासु गर्भं विन्दति योगितः ।

अदुष्टे प्राकृते वीजे जीवोपक्रमणे सति ॥

[च. चि. 30/125]

आधुनिक समय में उत्तरबस्ति देने की विधि—

आजकल उत्तरबस्ति देने के लिये नवीन उपकरण काम में लिए जा सकते हैं। इनसे काफी सुविधा रहती है।

[आ] मूत्राशय में उत्तरबस्ति देना—स्त्री को उत्तान [पीठ के बल] लिटाकर, जानु में पैरों को मोड़कर ऊंचा रखना चाहिये। फिर 'बस्तिशलाका' (Bladder Sound) से मूत्रमार्ग में अन्वेषण करें। यह शलाका विभिन्न नम्बरों की आती है, जो साधारणतया 25 से.मी. [10 इन्च] लम्बी होती है। इनका प्रयोग स्त्रियों और पुरुषों में होता है। यदि मूत्रमार्ग में पूयोत्पत्ति और व्रण की उपस्थिति हो तो शलाका का प्रयोग नहीं करना चाहिये। मूत्रमार्ग का निश्चय करने के पश्चात् फीमेल रबर कैथेटर या धातु के कैथेटर का प्रवेश करावें। इससे मूत्र का निर्गमन हो जाता है। अच्छा होता है कि कैथेटर प्रवेश कराने से पहले मूत्रत्याग करा देना चाहिये। नं. 6 और नं. 8 का रबर कैथेटर प्रवेश करने में आसानी रहती है।

इसके बाद कैथेटर के बाहरी सिरे पर धातु या कांच की सीरिज जोड़कर स्नेह या क्वाथ धीरे-धीरे मूत्राशय में प्रविष्ट करावें। औषधि भीतर चली जाने पर कैथेटर को सावधानीपूर्वक निकाल लेवें, जिससे वहां क्षत न होने पाये।

उत्तरबस्ति में क्वाथ दिए जाने पर वह द्रव शीघ्र ही वापस आ जाता है। तब उसे सम्यग्दत्तबस्ति समझें। स्नेह की उत्तरबस्ति दी गई हो तो वह शीघ्र वापस नहीं आता। कुछ समय ठहरकर बाहर निकलता है। अणुप्रवणप्रभाव से वह भीतर ही शोषित होता है अथवा धीरे-धीरे थोड़ी मात्रा में बाहर आता है।

[आ] अपत्यपथ [गर्भाशय] में उत्तरबस्ति देना—स्त्री का चित्त [उत्तान] लिटा कर जानु में पैर को मोड़कर ऊंचा रखना चाहिये। प्रथम योनिविस्फारक यंत्र द्वारा गर्भाशयग्रीवामुख को स्पष्ट कर लेवें। (अनेक प्रकार के योनिविस्फारक यंत्र Vaginal

Speculum) मिलते हैं; इनमें से यहाँ 'सिम का योनिविस्फारक यंत्र' (Sim's Vaginal Speculum) अधिक उपयोगी होता है। इस विस्फारक यंत्र में त्रिभिन्न नाप के दो नतोदर सिरे होते हैं, जो एक हथे द्वारा परस्पर जुड़े रहते हैं।)

फिर 'वोल्सेलम फार्सेप्स' (Volsellum Forceps) द्वारा गर्भाशय-ग्रीवा को पकड़ कर ऊपर उठाया जाता है। इस सन्दंश के मुख में तेज दात लगे होते हैं, जिनसे दबा हुआ तंग अंग दृढ़ता से पकड़ा जाता है, छुट्टा नहीं। इससे अत नहीं बनता। इसके द्वारा गर्भाशय-ग्रीवा को पकड़ कर ऊपर की ओर खींचने से उसका बाहरी मुख (External Os) (स्रोत) स्पष्ट दिखाई देने लगता है।

इसके बाद उस मुख में 'युटराइन साउण्ड' (Uterine Sound) जो एक चिकनी शलाका होती है, प्रविष्ट की जाती है। इसके प्रयोग से गर्भाशयग्रीवा का स्रोत शिथिल होकर खुल जाता है और गर्भाशयमार्ग स्पष्ट हो जाता है। अब साउण्ड को निकालकर उसमें युटराइन कैन्युला (Uterine Canula) फिट करें। यह धातु से निर्मित पोली नलिका होती है, जो लगभग 6 इन्च लम्बी होती है। कैन्युला को भीतर प्रविष्ट करने पर इसके बाहरी सिरे को मेटल की सीरिज से जोड़कर स्नेह या क्वाथ धीरे-धीरे गर्भाशय में पहुंचाये। इस कैन्युला का अग्रिम भाग कुछ टेढ़ा होता है और उसमें तीन-चार छिद्र होते हैं।

इस कैन्युला के स्थान पर 'रुबिन टेस्ट कैन्युला' (Rubin's Test Canula) का भी प्रयोग कर सकते हैं। इस उपकरण का उपयोग स्त्रियों में वंध्यात्म की परीक्षा करने में बीजवाहिनी (कैलोपियन ट्यूब) के स्रोतोरोध (मागविरोध) को ज्ञात करने के लिये किया जाता है। इसके अग्रभाग में 6 या 7 इन्च लम्बा युटराइन कैन्युला लगा रहता है। इसमें 3-4 छिद्र होते हैं। इसके पीछे लम्बी पोली नलिका होती है। इसके पिछले भाग में पकड़ने के लिये दो कर्णिकाएं होती हैं। आगे के भाग में रबर कैप लगी होती है, जो कैन्युला के सीमित अन्तर तक गर्भाशय में प्रवेश करने के लिये तथा उससे अधिक प्रवेश को रोकने के लिये कर्णिका के समान काम करती है। इस नलिका के पीछे मार्ग को खोलने या बन्द करने के लिये एक धुमाबदार पेंच लगा रहता है। इसके पीछे के छिद्र पर मेटल सीरिज या प्लास्टिक सीरिज जोड़कर स्नेह या क्वाथ गर्भाशय में धीरे-धीरे प्रविष्ट कराया जाता है। औपर भीतर चली जाने पर कैन्युला को सावधानीपूर्वक बाहर निकाल लेवें जिससे वहाँ अत न होने पावे।

- सावधानी- 1. ये सभी उपकरण शुद्ध और निर्जीवाणुक होने चाहिये।  
 2. प्रविष्ट किया जाने वाला द्रव भी अत्यन्त शुद्ध (Sterile) होना चाहिये, अन्यथा गर्भाशय ग्रादि भीतरी अंगों में शोथ-संक्रमण होने की सम्भावना रहती है।  
 3. गर्भाशय में बस्ति देने से पूर्व मूवत्याग और मलत्याग द्वारा मूत्राशय और मलाशय खाली रहने चाहिये।

उत्तरवस्ति में यदि क्वाथ दिया जाता है तो वह शीघ्र ही वापस आ जाता है। इसके वापिस आ जाने पर सम्यग्दत्त बस्ति समझनी चाहिये। उत्तरवस्ति में स्नेह दिया जाने पर वह शीघ्र बाहर नहीं आता। कुछ समय वह भीतर रहकर कार्यकर होता है। अणुप्रवणभाव से वह वहाँ शोषित होता है अथवा धीरे-धीरे निकल जाता है। इस प्रकार सम्यग्दत्त बस्ति के लक्षण होने पर दो या तीन बार क्वाथ या स्नेह से उत्तरवस्ति दी जानी चाहिये। 3 दिन तक उत्तरवस्ति देने के पश्चात् 3 दिन तक विश्राम करें। फिर 3 दिन तक उत्तरवस्ति देवें इस प्रकार व्याधिशमन होने तक, 3-3 दिन के अन्तर से दो या तीन बार उत्तरवस्ति का प्रयोग करते रहें।

गर्भाशय में उत्तरवस्ति देने का उचित समय आतंवाव बन्द होने के बाद 3-4 दिन तक रहता है। उस समय गर्भाशयग्रीवा के दोनों मुख विकसित रहते हैं। इसमें बस्ति देने में आसानी रहती है। फिर भी वोल्सेलम ग्रीवासंदंश और शलाका के प्रयोग से किसी भी समय बस्ति दी जा सकती है।

### योनिप्रक्षालन

(Vaginal Wash, Vaginal douche, Douching)

पर्याप्त—आचमनम् (पथ्यान्त्याचमनानि च. सु. शा 2/13; ड्लॉग—आचमन योनिप्रक्षालनं पाठान्तरे योनिप्रक्षालनोदकं), योनिधावनम् (च. चि. 30/83, सु. उ. 37/24, 25), योनिसेचनं (च. चि. 30/76), योनिमेक (च. चि. 30/61, 63), योनिपरिपेचनम् (अ. ह. उ. 34/33)।

विधि—योनि के आम्ब्यंतर भाग को धोने की प्राचीन विधि का कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। संभवतः भाग को विस्फारित कर द्रवके चुल्ले भरकर योनि में पूरित किये जाते हों। इसके लिए स्त्री का उत्तान [चित्त] लेटना आवश्यक था। योनिप्रक्षालन के लिए 'आचमन' शब्द का व्यवहार परिभाषिक अर्थ में सुश्रुत ने किया है।

योनि प्रक्षालन की वर्तमान-विधि निम्न प्रकार से है। वर्तमान में इसकी तीन विधियां प्रचलित हैं— लटकाने वाला डूश [ग्रैविटी डूश Gravity Douche, फाउन्टेन सीरिज Fountain Syringe]—यह डूशिंग की सबसे सरल और अधिक व्यावहारिक विधि है। इसके उपकरण में तीन भाग होते हैं—1. पानी का पात्र [Douche Can], 2. रबर की नली, 3. वेजाइनल नोजल और टूंटी या पेंच [Vaginal Nozzle and tape Screw] पानी के पात्र के नीचे के हिस्से में एक छिद्र होता है, इसमें रबड़ की 5 या 6 फुट लम्बी नली का एक सिरा जोड़ दिया जाता है, इसके सिरे पर वेजाइनल नोजल लगा दिया जाता है। नोजल धातु, कांच या प्लास्टिक का बना होता है। इसका आकार भी नलीनुमा होता है, इसमें एक और पेंच या टूंटी होती है [एनिमा देने वाले नोजल से यह नोजल कुछ लम्बा और टेढ़ा होता लगी होती है [एनिमा देने वाले नोजल से यह नोजल कुछ लम्बा और टेढ़ा होता है]]। इससे पानी को खोला या बन्द किया जा सकता है तथा पानी की धारा को

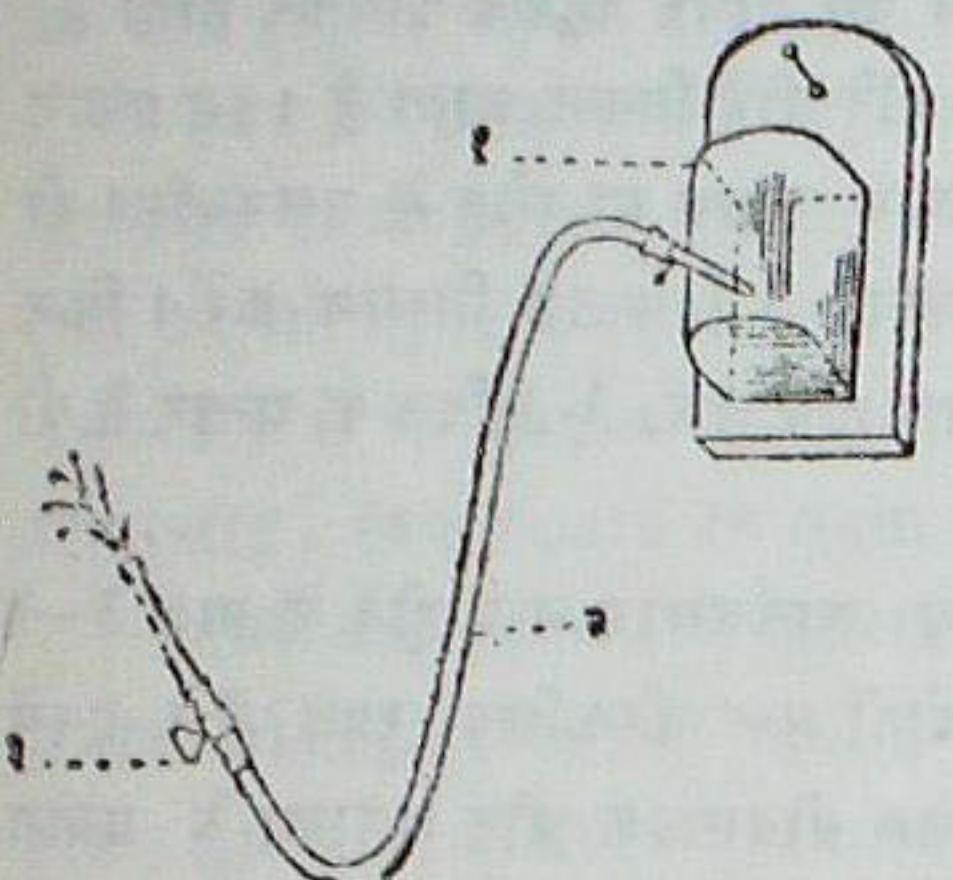
तेज या कम की जा सकती है। वेजाइनल नोजल विशिष्ट प्रकार का नोजल होता है, अन्य प्रकार के भी नोजल आते हैं। इसका योनि में प्रवेश किया जाता है। इसके सिरे

### प्रेविटी डू

1. डृश्य केन [पात्र]

2. नली

3. नोजल



पर छिद्र होते हैं, जिनसे द्रव धारा के रूप में बाहर निकलता है।

पानी के पात्र को 3-4 फुट ऊँचाई पर लटका देवें। उसमें 2 पिन्ट द्रव भर देवें। इस द्रव का तापमान लगभग  $105^{\circ}$  फारनहाइट या हल्का गर्म होना चाहिए। बहुत गर्म द्रव होने से आम्यंतर जननांगों को अति होने का भय रहता है। योनि की खुजली, सूजन, पीप को दूर करने के लिए जल में बोरिक एसिड, सोडा बाई कार्ब, लाईसोल, पोटेशियम परमेंगेट आदि औषधि मिलायी जाती है।

सिर के नीचे तकिया लगाकर स्त्री को चारपाई पर चित्त लेटाया जाय अथवा आधी लेटी हुई स्थिति में लेटाया रखा जाय। अर्थात् पीठ का भाग कुछ ऊपर रहे। चारपाई पर कोई वस्त्र आदि नहीं विछावें। स्त्री के शरीर का निचला भाग, अर्थात् नितम्बप्रदेश चारपाई के नीचे एक चौड़ा वर्तन रखें। योनि में नोजल प्रवेश कर दूंटी खोल देवें। योनि में द्रव बहुत धीरे-धीरे जाना चाहिए अतः दूंटी बहुत कम खोलनी चाहिए। 2 पिट द्रव से योनिप्रक्षालन में 20 मिनट लगने चाहिये। नोजल से पानी की धारा योनि में छूटेगी और योनि की दीवारें धुल जायेंगी। जब काफी पानी भीतर चला जाए तो दूंटी बन्द करके नोजल को योनि से बाहर निकाल लेवें, जिससे भीतर का पानी बाहर निकल कर चारपाई के नीचे रखे हुए पात्र में गिरेगा। योनि से सब पानी निकल जाने पर पुनः नोजल को योनि में प्रवेश कराकर दूंटी खोल देवें। इस तरह सम्पूर्ण जल समाप्त होने तक योनि को धोते रहें। इस बात का ध्यान रखें कि योनि की सब दीवारें और कोण तथा गर्भांश-मुख भलीभांती धुल जाए।

प्रयोग से पहले सब उपकरण अत्यन्त स्वच्छ, और निर्जीवाणुक होने चाहिए। नोजल को भी देख लेवें कि वह कहीं दूटा या चटका हुआ न हो अन्यथा इससे योनिक्षत हो सकता है।

आजकल डूशिंग के लिए दो मार्ग वाला (To way nozzle) भी मिलता है। इसके प्रयोग से बार-बार नोजल को बाहर निकालने की आवश्यकता नहीं होगी। इसके एक मार्ग से द्रव योनि में प्रवेश करता है तथा आम्यंतर प्रक्षालन के बाद द्रव दूसरे मार्ग से बाहर निकल जाता है। इस दूसरे सिरे पर रबड़ लगाकर चारपाई या मेज के नीचे रखे हुए पात्र में छोड़ देवें, जिससे धुला हुआ जल नली में से होकर उस पात्र में गिर जायगा। इस प्रकार के विशिष्ट नोजल का यही लाभ है कि नोजल योनि कि भित्ति में सट जाता है और द्रव बाहर बिलकुल नहीं निकलता, केवल दूसरे मार्ग से ही बाहर निकलता है।

इस विधि से डूशिंग की क्रिया स्त्री को लिटाकर या बैठाकर भी जा सकती है। परन्तु लिटाकर डूशिंग करना अच्छा होता है।

### (2) एनिमा सीरिज (Enema Syringe or Bulb Syringe) द्वारा डूशिंग—

यह एक प्रकार की पिचकारी होती है। इसके तीन भाग होते हैं। बीच में रबर का बल्ब (फूला हुआ भाग) तथा उसके दोनों सिरों पर दो रबर की नलियां होती हैं। एक नली के बाहरी सिरे पर वेजाइनल नोजल लगा दिया जाता है। दूसरी नली का बाहरी सिरा द्रव से भरे हुए पात्र में डूबो दिया जाता है। अब सीरिज के बल्ब को बारी बारी से दबाने और छोड़ने से द्रव बल्ब में चला आता है और नोजल से फुहार के रूप में छूटता है। अब स्त्री को चारपाई पर लिटाकर या बैठाकर नोजल को योनि में प्रविष्ट कर देते हैं तथा बल्ब को बारी-बारी से दबाते और छोड़ते हैं। जब योनि में पानी भर जाय तो नोजल निकाल लेते हैं और पानी बाहर निकल जाता है। पुनः नोजल योनि में प्रविष्ट कर धोते हैं। इस प्रकार बार-बार करते हैं।

### (3) विरलिंग वेजाइनल स्प्रे सीरिज (Whirling Vaginal Spray Syringe)

यह बहुत छोटा यंत्र है और किसी एकान्त स्थान की भी प्रायः आवश्यकता नहीं होती। इस यंत्र के तीन भाग होते हैं—1. रबर का बल्ब, 2. नोजल, 3. कोन। इस नोजल के अन्तिम भाग में अनेक छिद्र होते हैं, जिनसे द्रव धारा के रूप में निकलता है। कोन को खिसकाकर किसी स्थान में रखा जा सकता है।

सबसे पहले रबर के बल्ब को दबा कर भीतर की हवा निकाल दी जाती है और नोजल को द्रव में डूबा दिया जाता है जिससे द्रव बल्ब में भर जाता है। फिर योनि को जहां तक धोना हो वहां तक नोजल को योनि में प्रवेश करा देते हैं और कोन को खिसकाकर योनिमुख पर दबाकर रखते हैं जिससे द्रव योनि से बाहर नहीं निकल सकता। अब, बल्ब को दबाने से भीतर भरा हुआ द्रव नोजल से निकल कर योनि को धोता है। अब, बल्ब को दबाने सारा द्रव निकाल देना चाहिए। फिर धीरे-धीरे बल्ब पर से दबाव बल्ब को दबाकर सारा द्रव निकाल देना चाहिए। इससे योनि में गया हुआ द्रव [योनिप्रक्षालन करने के बाद] पुनः बल्ब में कम करते हैं, इससे योनि में गया हुआ द्रव [योनिप्रक्षालन करने के बाद] पुनः बल्ब में लौट आता है। इस तरह योनि में भरना और चूस लेना कई बार करें। अथवा एक

बार प्रयोग करने के बाद नोजल को योनि से बाहर निकाल लेवें और बल्ब को दबाकर द्रव को फेंक देवें तथा उसमें पुनः स्वच्छ द्रव भर लेवें। उसमें पूर्ववत् पुनः योनिप्रक्षालन करें। इस प्रकार कई बार करें।

रबर के कोन को खिसकाकर नोजल को योनि की भिन्न-भिन्न गरराईयों तक प्रवेश कराकर योनिमित्तयों और गर्भशियमुख को चारों ओर से धो डालें।

इस उपकरण द्वारा बैठकर, लेटकर या खड़े रहकर डूशिंग किया जा सकता है।

प्रयोग के अनन्तर उपकरण को स्वच्छ कर, मुखाकर रख देवें, अन्यथा खराब हो जाता है।

#### योनिप्रक्षालन के समय ध्यान देने योग्य तथ्य

1. नोजल और उससे छूटने वाले द्रव के दबाव से योनि का पूर्णतया फैल जाना आवश्यक होता है; अन्यथा द्रव सम्पूर्ण योनि का प्रक्षालन नहीं कर सकेगा। इसके लिए द्रव का दबाव के साथ छूटना आवश्यक है।

2. परन्तु यह दाब इतना अधिक नहीं होना चाहिये कि द्रव गर्भशिय में प्रविष्ट हो जाय, अन्यथा अनेक उपद्रव होने की संभावना रहती है।

3. गर्भविस्था में नोजल का आधा भाग ही योनि में प्रविष्ट किया जाय।

#### योनिप्रक्षालन का उद्देश्य

1. विभिन्न प्रकार के आर्तव सम्बन्धी रोग-रजोदोष तथा योनिरोग-योनिव्यापदों की चिकित्सा के लिए प्राचीन आचार्यों ने योनिप्रक्षालन का विधान बताया है। इसके लिए विभिन्न औषधि-साधित द्रवों का प्रयोग विहित है।

इन रोगों में योनिप्रक्षालन द्वारा आवश्यकतानुसार सेक, शोथनाशन, रक्तस्तंभन, जीवाणुनाशन और स्नावरोध की क्रिया संपादित की जाती है।

2. आजकल 'जन्मनिरोध' (Birth Control) के लिए अनेक प्रकार के द्रवों से योनिप्रक्षालन करने का विधान प्रचलित है। इसके द्वारा योनि में स्खलित शुक्र को धोकर पृथक कर देते हैं अथवा शुक्राणुओं का नाश कर देते हैं।

3. योनि के विशिष्ट संक्रामक रोगों जैसे गनोरिया, सिफलिस श्वेतप्रदर (ल्युको-रिया) आदि रोगों में भी योनिप्रक्षालन परम हितावह होता है।

4. योनि में आर्तवस्थाव के अर्तिरक्त अन्य प्रकार के स्राव भी निकलकर जमे रहते हैं। उन्हें स्वच्छ करना आवश्यक होता है। प्रतः योनि की स्वच्छता के लिए भी डूशिंग किया जाना अपेक्षित है।

5. आर्तवस्थावकाल में हल्के गर्म जल से योनिप्रक्षालन (डूशिंग) करना बहुत उपयोगी है। इससे कष्टार्तव की पीड़ा, कटिशूल आदि में आराम मिलता है।

#### योनि और भग प्रदेश में औषध-प्रयोग की विधियाँ

- (1) कल्क [लुगदी]

(2) पिचु—द्रव अथवा स्नेह में भिगोया हुआ वस्त्रखण्ड या रुई का टुकड़ा योनि के भीतर पूरित कर रखा जाता है। माजूफल आदि रक्तरोधक तथा रजःस्वाव-कारक द्रव्यों के चूर्ण की पोट्टली बनाकर भी योनि में रखी जाती है।

पिचुतैल—वातहर द्रव्यों से स्त्रिद्व तैल में भिगोया हुआ रुई का टुकड़ा योनि में धारण करना 'पिचुतैल' कहलाता है।<sup>24</sup>

- (3) लेप-भग उपर अथवा योनि की भीतरी भित्तियों पर औषधियों को लगाना।

- (4) धावन—(प्रक्षालन) (मु. उ. 38/24-25)

- (5) आपूरण—चूर्ण या कल्क को योनिगुहा में भरना। (मु. उ. 38/24)

- (6) वर्ति—(वर्ति)—योनि में प्रायः शोधन हेतु वातध्नादि द्रव्यों से निर्मित वर्ति का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार स्त्रीरोगों में प्रयुक्त होने वाली अनेक प्रयोगविधियों का विधान मिलता है।

<sup>24</sup>मु. उ. 37/23 पर डह्लण—'पिचुतैलं पिचुना तुलकेन तैलं वातहरद्रव्यवाधसिद्धं योनिषु धारयेत्। पिचुतैलं बलाघृतमित्यन्ये।'

# स्त्रीरोगों में प्रयुक्त होने वाले एलोपैथिक पेटेन्ट योग

स्त्रीरोगों में प्रयुक्त होने वाले अन्तःस्नावों के पेटेन्ट योग

## 1. पिट्यूट्री ग्रन्थि (Pituitary Gland)---

### [अ] पूर्वखण्ड [Anterior Lobe]

योग (1) इन्जे. साइनोपोइडिन (Inj. Sinopoidin, Park Davis and Co.) यह पूर्वखण्ड के स्त्रीप्रजननांगों सम्बन्धी अन्तःस्नावों का योग है। इसका प्रयोग वन्ध्यात्व निवारण और गर्भाशय से होने वाले रक्तस्नाव को रोकने के लिये होता है। मात्रा 75 युनिट चूर्ण की रबर-टोपीदार शीशी में मिलता है। इसमें 5 मि.ली. परिस्तुतजल मिला कर प्रति दूसरे दिन पेशीमार्ग से 1 मि.ली. का इन्जेक्शन लगावें। आर्तवस्नाव होने के एक सप्ताह बाद इन्जेक्शन प्रारम्भ कर पुनः आर्तवस्नाव होने के एक सप्ताह पूर्व इसे बन्द कर देना चाहिये। इम क्रम से पुनः प्रयोग कर सकते हैं।

(2) इन्जे. एम्बीनोन (Inj. Ambinon, Organon Lab.) मात्रा 1 मि.ली. पेशी-मार्ग से प्रतिवार।

[आ] पश्चिम खण्ड (Posterior Lobe) इसके दो स्नाव निकलते हैं।

[1] मूत्ररोधक और रक्तवाहिनी संकोचक (Antidiuretic or Vasopressin or Pressor)-इससे रक्तभार बढ़ता है। इसका पिट्रेसिन [Pitressin, Park Davis and Co.] का मुख्य योग है।

[2] गर्भाशय संकोचक (Oxotic)-यह गर्भाशय का संकोच करता है। इसके निम्न योग हैं—

[1] इन्जे. पिटोसीन (Pitocin, Park Davis and Co.)—गर्भाशय का संकोच करता है, अतः प्रसवोत्तर रक्तस्नाव को रोकता है। 1/2 से 1 मि.ली. (5-10 युनिट) प्रतिवार इन्जेक्शन लगावें।

[2] इन्जेक्शन पिट्यूट्रीन (Inj. Pituitary extract, Pituitrin, Park Davis and Co.)—यह गर्भाशय में बच्चा और अपरा निकालने और प्रसवोत्तर रक्त-स्नाव को रोकने में उपयोगी है। इन्जेक्शन लगाने के 5 मिनट के भीतर ही इसका प्रभाव होता है। मात्रा—1/2 से 1 मि.ली. पेशीमार्ग से इन्जेक्शन लगावें।

[3] इन्जे. पिट्यूट्री [Inj. Pituitary Post, Standard]

[4] इन्जे. पिट्यूट्री [Inj. Pituitary B]

[5] इन्जे. इनफूडीन (Inj. Infundin, Burrow Welcome and Co.)

मात्रा—1/2 से 1 मि.ली. पेशीमार्ग से विशेष स्थिति में नार्मल सेलाइन में घोल-कर सिरामार्ग से लगावें।

'इ) पिट्यूट्री ग्रन्थि के पूर्वखण्ड के अन्तःस्नावों के समान कार्य करने वाले अन्य ज्ञाव—इनका निर्माण गर्भवती स्त्री के मूत्र, गर्भवती घोड़ी के सीरम और अपरा से किया जाता है। इनका प्रयोग प्रायः वन्ध्यात्व और अनार्तव में किया जाता है।

(1) गर्भवती स्त्री के मूत्र से बनने वाले योग—

1. इन्जे. एन्ट्रूट्रीन 'एस' (Inj. Antruitrin 'S', Park Davis and Co.) मात्रा 500 से 1000 युनिट तक पेशीमार्ग के इन्जेक्शन लगावें।

2. प्रेग्निल (Pregnyl, Organon Laboratory)

3. प्रोलेन (Prolan, Bayer and Co.)

4. फाइजोस्टैब (Physostab, Boots and Co.)

5. गौनैन (Gonan, British Drug Co.)

[2] गर्भवती घोड़ी के सीरम से बनने वाले योग—

1. इन्जे. एन्टोस्टेब (Inj. Antostab, Boots and Co.)—यह अनार्तव में और इस्ट्रोजन के प्रयोग से रक्तस्नाव प्रारम्भ होने पर दिया जाता है।

मात्रा—पेशीमार्ग से 200 से 1000 युनिट तक सप्ताह में दो बार इन्जेक्शन लगाते हैं।

1. सेरोगान (Serogan, British Drug House)

3. ल्यूटिओव्रान्टिन (Lutcoantin, Bayer and Co.)

4. गोनाडिल (Gonadyl Roussels Laboratory)

5. जेओलिल (Geolyl, Organon Laboratory)

(2) बीजग्रन्थि के अन्तःस्नाव

इस्ट्रोजन (Oestrogen) के योग

इसके कृत्रिम विधि से निर्मित योग (जैसे स्टिलबेस्ट्रोल, हैक्सोस्टेरोल) मुख से देने पर भी काम करते हैं। किन्तु प्राकृतिक योग केवल इन्जेक्शन से ही कार्य करते हैं।

1. इन्जे. थीजिन (Inj. Theelin, Park Davis and Co.)—यह एक मि.ली. का तैल से बना एम्पुल आता है। मात्रा—पेशीमार्ग से दिन में 1 से 10 मि.ली. तक।

2. गोली और इन्जे. ओवोसाइक्लिन

मात्रा—(1) इन्जे.—1 से 5 मि.ग्रा. का एम्पुल आता है। पेशीमार्ग से 1 से 5

मि.ग्रा. तक प्रतिदिन या सप्ताह में 2-3 बार लगायें। (2) गोली—0.1 मि.ग्रा. और 10 मि.ग्रा. की गोली आती है। गोली को जिह्वा के नीचे रखकर चूसना चाहिए।

3. स्टिलबेस्ट्रोल (Tab. and Inj. Stilboestrol, Glaxo)—यह रासायनिक विधि से बनाया जाता है। इसका रासायनिक नाम 'डायएथिल स्टिलबेस्ट्रोल' (Diethyl Stilboestrol) है। बाजार में यह क्लिनेस्ट्रोल (Clinestrol) और निओ-क्लिनेस्ट्रोल (Neo-Clinestrol) के नाम से मिलता है।  
मात्रा - 0.1, और 1 मि.ग्रा. की गोलियां आती हैं। मुख से इसे एक मि.ग्रा. प्रतिदिन दो बार दे सकते हैं। निओक्लिनेस्ट्रोल का 1-5 मि.ग्रा. तक सप्ताह में दो-तीन बार इन्जेक्शन लगाएं।
4. गोली एस्टीनील [Tab Estriyl, Schering and Co.]—इसकी 0.02 मि.ग्रा. की गोली आती है। प्रतिदिन दो-तीन बार दे सकते हैं।
5. गोली इस्ट्रोप्रोजीन [Tab. Estroprogyn, Unichem.]—यह एचीस्टेरोन और एथिनिल इस्ट्रेडिओल का योग है। वन्ध्यात्व, बार-बार गर्भपात्र और गर्भाबस्था की परीक्षा के लिए इसका प्रयोग करते हैं। गोली एक दिन में दो बार दें।
6. इन्जे. इस्ट्रोप्रोजीन (Inj. Estroprogyn, Unichem)—यह प्रोजेस्टेरोन और इस्ट्रेडिओल बेन्जोएट का योग है। 1 मि.ली. का एम्पुल आता है।
7. सिन्थोवा (Synthova, Boots and Co.) मुखमार्ग से प्रतिदिन 5 मि.ग्रा. तीन बार प्रति सप्ताह में 5 दिन तक दें। मास बाद पुनः दोहराएं। 1.5 मि.ग्रा. का एम्पुल आता है। पेशीमार्ग से प्रति सप्ताह 2 या 3 बार इन्जे. दे सकते हैं।
8. गोली प्रोगिनॉन [Tab. Progynon, Schering & Co.]
9. गोली एटीसाइक्लिन [Tab. Eticyclin, Ciba]
10. गोली एस्ट्रोनेक्स Tab. Estronex, Dumax and Co.]
11. गोली फेनासाइक्लिन [Tab. Fenacyclin, Ciba]
12. गोली प्रीमेरिन [Tab. Premarin]
13. गोली एथिनिल इस्ट्रेडिओल [Tab. Ethinyl Estradiol]
14. गोली डाइनेस्ट्रोल [Tab. Dienoestrol]
15. इन्जे. प्रीमेरिन [Inj. Premarin]
16. " इस्ट्रेडिओल [Inj. Oestradiol]
17. " इस्ट्रीन [Inj. Oestrin]
18. " इस्ट्रोनेक्स [Inj. Estronex, Dumex]
19. " प्रोफोलिओल [Profoliol, Schering & Co.]
20. " क्रिनोवेरिल [Inj. Crinovaryl, Roussel] यह इस्ट्रेडिओल बेन्जोएट का योग है।
21. " प्रोगिनॉन 'बी' ओलिओसम [Progynon B Oleosum, Schering and Co.]

22. " सिस्टोमेन्सिन [Inj. Sistomensin, Ciba]
23. " इस्टोफार्म [Oestoform, B. D. H.]
24. " थेलेस्ट्रीन [Thelesterin, G. K.]
25. " इस्ट्रोन [Oestrone, Ciba]
26. " ओवोस्टेरैब [Ovostab, Boots & Co.]
27. " मेनोस्टोर्मन [Menostormon, Organon and Co.]
28. " कोलपोन [Kolpon, Organon Laboratory]
29. " हेक्सोस्टेरोल [Hexosterol]
- (2) प्रोजेस्टेरोन (Progesterone) के योग—
1. गोली और इन्जे. ल्यूटोसाइक्लिन (Tab. & Inj. Leutocyclin, Ciba) —मात्रा 5 मि.ग्रा. की गोली मुख द्वारा 1 से 4 गोली तक प्रतिदिन दे सकते हैं। इसके 2, 5 और 10 मि.ग्रा. के एम्पुल आते हैं। 5 से 20 मि.ग्रा. प्रतिदिन पेशीमार्ग से इन्जेक्शन लगाना चाहिये।
  2. इन्जे. प्रोल्यूटन (Inj. Proluton, Schering & Co.)—5 से 20 मि.ग्रा. पेशीमार्ग से प्रतिदिन इन्जेक्शन लगा सकते हैं।
  3. इन्जे. प्रोजेस्टिन (Inj. Progestin, British Drug House)—इसका 1 मिली. का एम्पुल आता है। पेशीमार्ग से प्रतिदिन 1 के हिसाब से 4 या 5 इन्जेक्शन देना चाहिए।
  4. इन्जे. ल्यूटिओस्टेरैब (Inj. Leuteostab, Boots & Co.)—1 से 10 मि.ग्रा. पेशीमार्ग से इन्जेक्शन दिया जाता है।
  5. इन्जे. ल्यूटोजील (Inj. Lutogyl, Roussel & Co.)—पेशीमार्ग से 10 से 50 मि.ग्रा. प्रतिदिन दे सकते हैं।
  6. इन्जे. प्रेनोन (Inj. Pranone, Schering & Co.) इसके 2, 5 और 10 मि.ग्रा. के एम्पुल आते हैं। प्रति सप्ताह 2 या 3 बार इसका इन्जेक्शन लगाते हैं।
- (3) चुलिकाग्रन्थि का स्नाव--
- इसका एक योग प्रचलित है।
- गोली हारमोटोन टी. (Tab. Hormotone T., Carwick & Co.)—यह इस्ट्रोन, इस्ट्रोडिनल और थाइरॉड एक्स्ट्रैक्ट का योग है। अर्तव विकृतियों में इसका प्रयोग करते हैं। प्रतिदिन 1 से 2 गोली मुख से दे सकते हैं।
- (4) पुरुष प्रजनन अन्तःस्नाव-टेस्टोस्टेरोन (Testosterone) —
- स्त्रियों में यह अन्तःस्नाव गर्भाशय के पेशीस्तर और अन्तःकला पर प्रोजेस्टेरोन के समान कार्य करता है। इसके निम्न योग प्रचलित हैं।
1. गोली और इन्जे. पेराण्ड्रिन (Tab. & Inj. Parandrin, Ciba)—मात्रा

1 से 4 गोली प्रतिदिन मुख में जिहा के नीचे रखकर चूसना चाहिये। 1 एम्पुल प्रति सप्ताह दो बार इन्जेक्शन दिया जाता है। एक चिकित्साक्रम में प्रायः 12 इन्जेक्शन लगाने चाहिये।

2. इन्जे. एथिस्टेरोन (Inj. Ethisterone, British Drug House)—यह एण्ड्रोजन (Androgen) और इस्ट्रोजन का मिश्रित योग है। मात्रा—25 मिग्रा. की 1 गोली मुख से चार बार प्रतिदिन दे सकते हैं।

3. इन्जे. युनीट्रोस्टेरोन (Inj. Unitristerone, Unichem Laboratory) यह पुरुष और स्त्री के प्रजनन सम्बन्धी अन्तःस्नावों का योग है। मात्रा—इसका 1 मि.ली. का एक एम्पुल प्रतिदिन या सप्ताह में दो-तीन बार इन्जेक्शन दे सकते हैं।

4. इन्जे. प्राइमोडियन (Inj. Primodian)—यह भी स्त्री और पुरुष के प्रजनन सम्बन्धी अन्तःस्नावों का योग है। मात्रा—उसका एक एम्पुल प्रतिदिन या सप्ताह में 2-2 बार इन्जेक्शन लगा सकते हैं।

#### अर्गट (Ergot) के योग—

यह एक प्रकार के फंगस द्वारा निर्मित द्रव्य है। इनमें तीन मुख्य तत्व पाये जाते हैं

1. अर्गोटेमिन (Ergotamine)
2. अर्गोटोक्सिन (Ergotoxin)
3. अर्गोमेट्रीन (Ergometrine)

इससे गर्भवती स्त्री के गर्भाशय का संकोच होता है। अतः प्रसव के समय जब गर्भाशय का मुख पूर्णतया खुल गया हो और पीड़ाएं क्रम होने के कारण प्रसव होने में कठिनाई हो रही हो, तब इसका प्रयोग करना चाहिए, अन्यथा गर्भाशय फटने का डर रहता है। यह औषधि देने के बाद पांच मिनट के अन्दर अपना प्रभाव करती है।

यह औषधि माइग्रेन में भी उपयोगी है। प्रसवोत्तर रक्तस्राव को भी रोकती है।

1. इन्जे. अर्गोमेट्रीन मेलिएट [Inj. Ergometrine Maleate, B.W. & Co.] इसका 0.5 मिग्रा. का एक मिली. का एम्पुल आता है। पेशीमार्ग से इन्जेक्शन देना चाहिये। सिरामार्ग से 1/4 से 1/2 मिली. तक प्रतिबार इन्जेक्शन दे सकते हैं।

2. गोली अर्बोलीन [Tab. Erbolin, Glaxo]—इसकी 0.4 मिग्रा. की गोली आती है। मुख से एक गोली तीनबार प्रतिदिन दे सकते हैं।

3. गोली और इन्जे. गाइनर्जेन [Tab. & Inj. Gynergen, Sandoz] इसकी एक मिग्रा. की गोली और 0.5 मिग्रा. का एम्पुल आता है। मात्रा—मुख से एक गोली प्रतिबार दे सकते हैं। पेशीमार्ग से 1/2 से 1 मिली. प्रतिबार इन्जेक्शन दे सकते हैं।

#### विटामिन ई के योग (Vitamin E a-tocopherol)

यह औषधि स्त्रियों में अपरा (Placenta) सम्बन्धी विकृति को दूर कर बार-बार होने वाले गर्भपात का निवारण करती है। पुरुषों में शुक्राणु-निर्माण की विकृति तथा नाश को दूर कर उन्हें सन्तानोत्पत्तिक्षम बनाती है।

योग—(1) कैप्सूल विटामिन (Capsule Viteolin, Glaxo)—इसके 6, 30 और 100 मिग्रा. के कैप्सूल आते हैं। मात्रा—जिनमें बार-बार गर्भपात (Recurrent Abortion) होता हो उनमें सम्पूर्ण गर्भावस्थाकाल तक 6 मिग्रा. प्रतिदिन दें। गर्भपात (Threatened Abortion) में प्रारम्भ में 20-30 मि.ग्रा. और बाद में 6 मि.ग्रा. प्रतिदिन देते हैं।

(2) गोली और इन्जे. एफिनाल [Tab. & Inj. Ephynal, Roche Co.]

मात्रा—इसकी 10 मि.ग्रा. की गोली आती है। और 2 मि.ली. में 10 मि.ग्रा. का एम्पुल आता है। मुख से 1 से 5 गोली, पेशीमार्ग से इन्जेक्शन दो बार दे सकते हैं।

(3) इन्जे. फ्लेवोल्यूटन (Inj. Flavolutan, Boeheinger Menhein Co.)

यह विटामिन ई और कार्पस ल्यूटियम का निश्चित योग है। अतः यह वंध्यात्व, गर्भस्राव रोकने और आर्तवविकृतियों को दूर करने में उपयोगी है। प्रजननांगों को पुष्ट करता है। मात्रा—इसके 5, 10 और 30 मि.ग्रा. के एम्पुल आते हैं, पेशीमार्ग से इसको 5 से 10 मि.ग्रा. मात्रा में 1 से 3 बार प्रति सप्ताह इन्जेक्शन लगाना चाहिये।

#### स्त्रीरोगों की संक्षिप्त पेटेन्ट चिकित्सा

##### आर्तवनिवृत्ति (Menopause) जन्य उपद्रवों की शान्ति के लिए

1. कैप्सूल जेरियाटोन (Capsule Geriatone, John Wyeth Co.) यह एथिनिल इस्ट्रैडिओल, मेथिल टेस्टोस्टेरोन, विटामिन सी, बी१, बी११, फोलिकएसिड, फेरन सल्फ, मेथिन एमफेटामिन का योग है।

मात्रा—प्रतिदिन एक कैप्सूल मध्यान्ह के भोजन के बाद, लगातार 3 सप्ताह तक दें, फिर 10 दिन बन्द कर पुनः इसी प्रकार से सेवन करायें।

2. इस्ट्रोजन के योग—यथा क्लिनेस्ट्रोल (Clestrol, Ciba), निम्फो-क्लिनेस्ट्रोल (Neo-Clinestrol-Ciba), स्टिलबेस्ट्रोल (B.D.H.), थीलिन (P.D.Co.) ओवो-साइक्लिन (Ciba), एस्ट्रोप्रोजीन (Unichem)।

3. विटामिन ई के योग—विटामिन (Glaxo)।

4. हारमोटोन 'टी' (Carwick and Co.) की गोली प्रतिदिन दो बार दें।

(यह इस्ट्रोन, इस्ट्रैडिओल और थायराइड एक्सट्रैक्ट का योग है।)

##### आर्तवादर्शन (Amenorrhoea)

इसमें स्त्रीप्रजनन सम्बन्धी अन्तःस्नावों के योग उपयोगी होते हैं।

[क] इस्ट्रोजन के योग—इनका प्रयोग रक्तस्राव प्रारम्भ होने के पूर्व करना

चाहिये।

1. इन्जेक्शन इस्ट्रैडीडिओल बेन्जोआस (Inj: estradiol Benzoas) 5 मि. ग्रा. प्रति तीसरे दिन, 5 बार तक, पेशीमार्ग से इन्जेक्शन दें। यदि इससे आर्तवप्रवृत्ति न हो तो 10 दिन का अन्तर छोड़कर पुनः इसी प्रकार 5 इन्जेक्शन दें। जब तक रक्त-स्राव न हो तब तक करना चाहिये।

2. स्टिलबेस्ट्रोल (Stilboestrol) और डाइनोस्ट्रोल (Dienoestrol Boots Co.) -मुख से 3 से 5 मि. ग्रा. तक गोली के रूप में प्रतिदिन, 10 दिन तक दें। यदि रक्तस्राव प्रारम्भ न हो तो 10 दिन औपचि बढ़ कर पुनः 10 दिन औपचि देनी चाहिये। यह कम जब तक रक्तस्राव प्रारम्भ न हो तब तक करना चाहिये।

इस्ट्रोजन के अन्य योग—

1. मुखमार्ग से गोली के रूप में—ओवोसाइक्लिन (Ovocyclin-Ciba), सिनथोवा (Synthova, Boots and Co.), एटिसाइक्लिन (Eticyclin-Ciba), ओस्टोफार्म (Ostoform-B.D.H.), क्लिनोस्ट्रोल (Clinoestrol), स्टिलबेस्ट्रोल कम्पाउण्ड (Stilboestrol Compound, Boots), गाइनोस्ट्रिल Gynoestryl, Roussels Lab.)।

2. पेशीमार्ग से सूचीवेध द्वारा—ओवोसाइक्लिन (Ovocyclin-Ciba), निओ-क्लिनोस्ट्रोल (Neo-Clinoestrol, Glaxo), क्लिनोस्ट्रोल (Clinoestrol), सिन्थोवा (Synthova-Boots).

[ख] रक्तस्राव प्रारम्भ होने पर—गर्भवती स्त्री के मूत्र से बने और गर्भवती घोड़ी के सीरम से बने योगों का प्रयोग करते हैं—

1. गर्भवती स्त्री के मूत्रसे बने योग—जैसे एन्ट्रूचूट्रीन 'एस' (Antruitrin 'S', Park Davis & Co.), प्रेग्निल (Pregnyl, Organon Laboratory), प्रोलेन Prolan, Bayer Co.), फाइसोस्टेब (Physostab, Boots & Co.), गोनेन Gonan, British Drug Co.).

इनमें से किसी एक की 300 से 500 इकाई (Units) मात्रा पेशीमार्ग से इन्जेक्शन द्वारा प्रति तीसरे दिन 5 बार दें। दो सप्ताह बाद पुनः इसको लगावें।

2. गर्भवती घोड़ी के सीरम से बने योग—जैसे एन्टोस्टेब (Antostab-Boots & Co.) सेरोगान (Serogan, British Drug), ल्युटिओआन्टीन (Luteoantin, Bayer & Co.), गोनाडिल (Gonadyl, Roussels Laboratory), जेओलिल (Geoly Organon Laboratory).

इनमें से किसी एक को 300 से 500 इकाई मात्रा में पेशीमार्ग से प्रति सप्ताह 3 बार के द्वारा से 5 बार तक इन्जेक्शन दें। दो सप्ताह बाद पुनः प्रयोग करें।

इन दोनों प्रकार के योगों का बराबर-बराबर मात्रा में एक साथ प्रयोग कर

सकते हैं। इसके प्रोजेस्टेरोन [Progesterone] ग्रथवा साइनोपोइडीन [Synoploidin, Park Davis & Co.] का 75 युनिट की मात्रा में पेशीमार्ग से इन्जेक्शन लगाते हैं। (साइनोपोइडीन पोषणिकाग्रन्थि के अग्रखण्ड के स्त्रीप्रजनन सम्बन्धी अन्तःस्रावों का योग है।)

अन्य योग—

- मेंसट्रोन [Menstrone, C.D.C.] मात्रा दो गोली, दिन में तीन बार तक।
- अशोका कार्डियल [Ashoka Cordial; O.R.C.] एक से दो चम्मच, जल से, दिन में दो बार।
- एफिनाल [Aphynal, Roche]-विटामिन 'ई'
- अशोकालेट्रिस [Ashokaletris, Hind Pharma] 1-1 चम्मच, 2-3 बार, जल से, भोजन के बाद दें।
- टैब. एलोज कम्पाउण्ड [Tab Aloes Compound, Alarsin & Co.]

यह घृतकुमारी, मिर, मंजिष्ठा, हरमल तथा लोहभस्म का योग है। मात्रा—1 गोली, दिन में 2-3 बार मुख से दें।

- टैब. ल्युनारेक्स (चरक)-प्रत्येक गोली 2;6 मिग्रा. की आती है। आसाडिया, दालचीनी, इलायची, एलुवा, गाजरबीज, हीराकसीस, कलौंजी, जीरा, मेथी, उलटकंबल, रायणबीज, सोंठ, सूबा, वास का योग है। ये गोलियां दो तरह की आती हैं—साधारण और तेज। तेज में काला तिल और टंकण अधिक है। मात्रा—2 गोली, दिन में 3-4 बार दें, जल से (2 से चार दिन तक दें)। उपयोग—आर्तवस्राव की रुकावट, कम आना, कष्टार्तव। दुर्बल स्त्रियों में अनियमित आर्तवस्राव होने पर इसके साथ (M2 TONE-चरक) देना चाहिये। इसे सगर्भावस्था में न दें।

#### कष्टार्तव (Dysmenorrhoea)

(1) गोली और सूचीवेध 'एफीनाल' (Tab. & Inj. Ephenal, Roche & Co.) यह विटामिन 'ई' का उत्तम योग है। मात्रा—मुखमार्ग से 100 से 200 मिग्रा. प्रतिदिन दें। पेशीमार्ग से प्रतिदिन 1 से 3 एम्पुल लगावें।

(2) इन्जेक्शन डेप्रोपेनेक्स (Inj. Depropanex, Volkart Bros.)—यह पैकियाज का सत्व है। एम्पुल में मिलता है। मात्रा—एक एम्पुल पेशीमार्ग से लगावें।

(3) टैब. और इन्ज. डाइहाइडरगौट (Tab. & Inj. Dihydrogot, Sandoz) यह अर्गेट का योग है। गर्भावस्था में इसका प्रयोग निषिद्ध है। मात्रा—इसकी 1 मि. ग्रा. की गोली आती है। एक-एक गोली 3 बार दिन में मुख से दें।

इसका 1 मिली. का इन्जेक्शन के लिये एम्पुल आता है। पेशीमार्ग या अघस्तक मार्ग से एक से दो मिली. तक का इन्जेक्शन लगा सकते हैं।

- टैब. एलोज कम्पाउण्ड [Tab. Aloes Compound, Alarsin & Co.]—

यह घृतकुमारी, मिर, मंजिष्ठा, हरमल और लौहभस्म का योग है। मात्रा—दो-दो गोली, दिन में 3 बार मुख से दें।

(5) पीड़ा-शमन के लिये लाइकर सेन्डस (Liquor Sedans, Park Davis & Co.)—20 से 30 बून्द तीन बार प्रतिदिन देनी चाहिए। या एस्प्रिन, नोवाल्जीन, सेरिडोन आदि शामक औषधियां भी दिन में तीन बार दी जा सकती हैं।

(6) आर्टंवप्रवृत्ति प्रारम्भ होने से पूर्व पीड़ा होने पर—आर्टंवप्रवृत्ति के एक सप्ताह पूर्व से प्रोजेस्ट्रोन देना प्रारम्भ कर देना चाहिये। आर्टंवप्रवृत्ति के समय पीड़ा होने पर आर्टंव प्रारम्भ होने के 3-4 दिन पूर्व से स्टिलबेस्ट्रोल देना चाहिये।

(7) टेब. (टिकी) टीनापेईन [चरक]—यह एलुवा, शुद्ध हींग, हिराबोल, हीराकसीस, शिलाजीत, शुद्ध टंकण का योग है। गुंवारपाठे की मावना। प्रत्येक गोली 256 मिग्रा. की होती है। मात्रा—2 गोली। दिन में 2-3 बार।

(8) टेब.(टिकी) ल्युनारेक्स [चरक]—उपर्युक्त। मात्रा—2 गोली, दिन में 2-3 बार, दूध या जल से।

### असूग्दर [गर्भशय से रक्तस्राव होना]

1. हेमोलिन (Inj. Haemolin, Adco Ltd.)—यह लाक्स (Lac. Laccaic acid) का योग है। यह रक्तस्रावरोधक है। मात्रा—इसका एक एम्पुल प्रति आधे घण्टे से मुख से दे सकते हैं। प्रतिदिन 4 से 5 एम्पुल तक देवें।

2. टेब. लेप्टाडीन (Tab. Leptaden, Alarsin and Co.) यह जीवन्ती का योग है। मात्रा—2-2 गोली, दिन में दो-तीन बार देवें।

3. कैल्सियम के योग—

1. इन्जेक्शन केल्सी-ओस्टेलिन (Inj. Calci-ostelin; Glaxo).
2. टेबलेट ओस्टिओ-कैल्सियम—(Tab. Osteo-Calcium, Glaxo).
3. इन्ज. कैल्सियम सेन्डोज—(Inj. Calcium, Sandoz).

[4] प्रोजेस्ट्रोन के योग—प्रोजेस्ट्रिन (Progesterin, B.D.H.), ल्युटोफार्म टेब, (Lutoform Tab., B.D.H.), ल्युटोसाइक्लिन (Lutocyclin Ciba)

[5] पुरुषान्तःस्राव के योग—टेस्टाफार्म [Testaform, B.D.H.] तथा एन्ड्रोजेस्ट्रोन [Androgeston, Shering]

[6] 'अशोक' के योग—1. अशोकालेट्रिस [Ashokaletris, Hind] 1-2 चम्मच, 2-3 बार दिन में, फलों के रस के साथ।

0. अशोका कार्डियल [Ashoka Cordial, O. R. C.]—1-0 चम्मच, दो बार प्रतिदिन।

[7] गोली पोभेक्स साधारण [चरक]—प्रत्येक गोली 256 मिग्रा. की होती है। यह घड़ला, हिराबोल, माजूफल, मोचरस, नागकेसर, कौच, शुद्ध स्वर्णगैरिक, शुद्ध

स्फटिका, प्रवालपिण्ठी का योग है। मात्रा—2 से 3 गोली दिन में 2-4 बार, मीठे दूध से। रोग की तीव्रावस्था में प्रति 2-2 घण्टे से 2-2 गोली दें। उपयोग—असूग्दर, रक्तप्रदर, रक्तार्थ, अनियमित रक्तस्राव या आर्टंवस्राव होना।

[8] गोली पोभेक्स तेज [चरक]—320 मिग्रा. की प्रत्येक गोली होती है। यह चन्द्रकला, दारूहरिद्रा, गर्भपालरस, गोदंतीभस्म, कुकुटांडत्वरमस्म, माजूफल, माजिक्स-भस्म, मोचरस, नागकेसर, पोस्तडोडे का घन, प्रवालपिण्ठी, रक्तबोल, रसवंती, सोनागेहू, शुद्धस्फटिका, जहरमोहरापिण्ठी का योग है। मात्रा—2-2 गोली, प्रति 3 घण्टे से या 2-3 बार जल से। उपयोग—रक्तप्रदर, प्रसवोत्तर रक्तस्राव, अत्यारंब, गर्भपात-जन्य रक्तस्राव, उधर्व या अधोग रक्तपित्त।

[9] आयापौन (Ayapon, Alarsin & Co.)—यह आयापान, अशोक, गोदन्ती, पीला नागकेसर, काम्बोजी और जीवन्ती का योग है। मात्रा—2-2 गोली, दिन में 2-3 बार। उपयोग—यह रक्तस्राव को रोकती है। रक्तप्रदर, आर्टंवान्तरकालिक रक्तप्रदर, अत्यारंब, रजोदर्शन और रजोनिवृत्तिकालीन अतिरक्तप्रवृत्ति, अज्ञात कारण-जन्य रक्तस्राव, गर्भशय की क्रियात्मक विकृति जन्य रक्तस्राव [D.U.B. डिस्फंक्शनल युटेराइन ब्लीडिंग] में बहुत लाभकारी है।

### गर्भशय से क्रियात्मक कारणों से रक्तस्राव होना

(Functional Metropathia Hemorrhagica Dysfunctional Uterine Bleeding)

यह वीजग्रन्थि और पोषणिकाग्रन्थि के अग्रवार्ड की विकृति के कारण होता है—इसके कारण 2-3 मास तक, आर्टंवस्राव बन्द होने के पश्चात् पुनः अनियमित रूप से गर्भशय से रक्तस्राव होने लगता है।

1. 'प्रोजेस्ट्रोन' का 10 से 20 मिग्रा. का प्रतिदिन पेशीमार्ग से इन्जेक्शन दें। रक्तस्रावकाल में एक सप्ताह तक प्रतिदिन, फिर दो सप्ताह तक प्रति सप्ताह 3 बार, फिर एक सप्ताह तक दो बार इन्जेक्शन देना चाहिए।

2. रक्तस्राव के समय 'एथिडोल', 'एथिनील इस्ट्रेडियोल, [शेरिंग एण्ड कम्पनी] का 0.1 मिग्रा. का प्रतिदिन 2 बार, 10 दिन तक मुख से प्रयोग कराएं। फिर एथिस्टेरोन (ब्रिटिश ड्रग हाउस) 10 मिग्रा. का प्रति सप्ताह 3 बार, दो सप्ताह तक पेशीमार्ग से इन्जेक्शन देना चाहिए।

3. युवावस्था में 'थायरोइड एक्सट्रैक्ट' 1/2 से 1 ग्रेन, दो बार प्रतिदिन मुख से देना चाहिए अथवा 'हारमोटोन टी.' एक गोली, दिन में दो बार दी जाय।

4. पुरुष प्रजनन-अन्तःस्राव 'टेस्टोस्टेरोन' का 10 मिग्रा. प्रतिदिन, 10 दिन तक पेशीमार्ग से इन्जेक्शन दिया जाता है, किन्तु इससे इमथु, केश आदि पुष्पत्व के लक्षण उत्पन्न होने की संभावना रहती है।

5. अन्तःस्राव चिकित्सा से लाभ न मिलने पर गर्भाशय को काटकर पृथक् कर देना चाहिये।

**श्वेतप्रदर [ल्युकोरिया Leucorrhoea]** (योनि से श्वेतस्राव होना)

[क] मुख से देने योग्य औषधियाँ—

(1) गोली ल्लुकोल (Tab. Lucol, Himalaya Drug Co.)—यह लौहभस्म, लोध्र, अश्वगन्धा, जीवन्ती, शतावरी और अशोक का योग है। मात्रा 2-3 गोली, दिन में दो बार, जल या दूध से दें।

(2) गोली ल्लुकोरिन (Tab. Leucorrhine, D.B.L.) मात्रा—1 गोली, दिन में दो बार, भोजन से पूर्व।

(3) गोली माइरोन (Tab. Myron, Alarsin & Co.)—यह मिर, मुकुल, अभकभस्म और लौहभस्म का योग है। मात्रा—2 गोली, दिन में तीन बार भोजन के पश्चात् मुख से देनी चाहिये। लाभ दिखने पर मात्रा घटाते रहें।

(4) तरल अशोका कार्डियल (Ashoka Cordial, O. R. C.) मात्रा—1 चम्मच दिन में तीन बार दें।

(5) तरल अशोका एलिक्सिर (Ashoka Elixir) मात्रा—1 चम्मच, दिन में तीन बार दें।

(6) गोली हारमोटोन 'टी' (Tab. Hormotone T., Carwick & Co.)—यह स्त्री-प्रजनन अन्तःस्राव का प्राकृत योग है। इसमें इस्ट्रोन और इस्ट्रोडियोल होता है। मात्रा—1 गोली, दो बार प्रतिदिन।

(7) गोली स्टिलबेस्ट्रोल (Tab. Stileboestrol, Glaxo)—रसायन नाम डाय-एथिल स्टिलबेस्ट्रोल है और कृत्रिमविधि से निर्मित इस्ट्रोजन का योग है। मात्रा—1 मि. ग्रा. की 1/2 गोली, प्रतिदिन दो बार दें।

(8) टैब. फेमिप्लेक्स (चरक)—प्रत्येक गोली 320 मिग्रा. की आती है। घटक—अशोकत्वक्, श्वेतचंदन, दारुहल्दी, धायपुष्प, गोदन्तीभस्म, गोखरु, हीराबोल, जासुंदत्वक्, कमलपुष्प, चणकबाब, लोध्र, लौहभस्म, नागकेशर, उलटकम्बल, प्रवाल-पिण्ठी, पुचजीवीत्वक्, शिमलात्वक्, शतावरी, शुक्तिभस्म, शुद्ध स्फटिक, सुवर्णमाधिक-भस्म, त्रिवगभस्म, उमराफल, अडूसा, शिलाजीत। मेंहदी रस और तांदलजा के क्वाथ की भावना। मात्रा 2-2 गोली। दिन में 2 बार दूध या जल से दीर्घकाल तक सेवनी करनी आवश्यक है। उपयोग—श्वेतप्रदर और किसी भी प्रकार के योनिस्राव को रोकती है।

(9) द्रव (प्रवाही) एम 2 टोन (चरक)—यह ग्रमृतारिष्ट, अशोकारिष्ट, चंदनासव, दशमूलारिष्ट, लोध्रासव, उशीरासव का याग है। मात्रा—1/2 बड़ा चम्मच, उतने ही जल के साथ मिलाकर, भोजन के आधे घण्टे पहले। उपयोग—श्वेतप्रदर, रक्त

प्रदर, आतंवस्राव की अनियमितता। इसके साथ पोर्फेक्या गोली (चरक) का प्रयोग करना चाहिये।

(10) बंगशिल (Tab. Bangshil, Alarsia Co.)—यह बंगभस्म, शिलाजीत, चन्द्रप्रभा, श्वेतचन्दन, वंशलोचन, लौहभस्म, स्वर्णमाधिकभस्म और गुग्गुनु का योग है। मात्रा—2-2 गोली, दिन में 3-4 बार। उपयोग—गर्भाशय-योनि के जीर्ण और तीव्र शोथ में गुणाकारी है। इससे योनिमार्ग का ट्राइकोमोनस जीवाणु-संक्रमणजन्यशोथ में विशेष लाभ मिलता है। सर्गभागों के आक्षेप में भी लाभ करता है।

स्थानिक प्रयोग—

(ख) योनिमार्ग में धारण करने के लिए गोलियाँ—

(1) गोली एस.वी.सी. (Tab. S. V. C., May & Baker Co.)

(2) " 'कोल्पोसलफाना (Colposulphana)

(3) " ट्राइकोसिड ओव्युल (Trikocid Ovules, Hind Chemical)

(4) " डेसुलान (Desulan, Cilag.)

(5) " डेवेगान (Devegan, Hoechst)

(6) " माइकोस्टेटिन वेज (Mycostatin Vaginal, Squibb)

मात्रा—प्रतिदिन रात्रि में, सोने से पूर्व उपर्युक्त में से किसी एक की गोली योनि के भीतर रखनी चाहिये। 0-15 दिन प्रयोग करने से लाभ मिलता है।

(2) योनिधावन (Douche)—1. लेक्टिक एसिड 60 ग्रेन (4 ग्राम) को 1 पाईंट (600 सी.सी.) जल में मिलाकर योनि को भीतर से धोना चाहिये।

2. साधारण लवण विलयन से योनिधावन करें।

3. 125 मिली. जल में 500 मिग्रा. बोरेक्स या फिटकरी डालकर योनिप्रक्षलन करें।

4. 20 आंस जल में 2 ग्रेन पोटासपरमैग्नेट डालकर योनिधावन करें।

**गर्भधारणा की परीक्षा [Pregnancy Test]** के लिये औषधियाँ

(1) सूचीवेध डिसेक्टन (Inj. Disecron, Schering & Co.) वह प्रोजेस्ट्रोन और इस्ट्रोडियोल का योग है। मात्रा—यह 1 मिली. के एम्पुल में आता है।

आ. यदि स्त्री का मासिकधर्म रुका हो और गर्भधारणा की आशंका हो तो 1 मिली. का एम्पुल पेशीमार्ग से सूचीवेध लगावें। यदि 14 दिन के भीतर मासिकधर्म प्रारम्भ न हो तो स्त्री को गर्भवती समझना चाहिये।

आ. यदि मासिकधर्म ठीक से न होता हो, तो प्रति 28 दिन पर इसका इन्जेक्शन लगाना चाहिये। इस प्रकार चार माह तक इन्जेक्शन लगाने से मासिकधर्म नियमित होने लगता है।

(2) गोली और इन्जेक्शन ड्रूगिनन फोर्ट (Tab. & Inj. Disecron) 1/2 ग्रेन

Boeheinger Menheim Co.)—प्रतिदिन 1 गोली या इन्जेक्शन लगातार दो दिन तक दिख जाएं। यदि 10वें दिन तक आर्टवरोध हो जाता है, तो गर्भावस्था नहीं समझनी चाहिए। इससे आर्टवस्त्राव में भी लाभ होता है।

### गर्भस्त्राव (Abortion)

गर्भपात या गर्भस्त्राव को रोकने के लिए—

रुग्णा को शय्याविश्राम करावें, मारफिन 1/4 ग्रेन (मिग्रा. 15) अधस्त्रवक्ष मार्ग से सूचीवेध दें।

1. विटामिण 'ई' (Vitamindon 'E')—Indo-Pharma की 3 से 10 गोली प्रतिदिन मुखमार्ग से दें। या गोली 'एफीनाल' (Tab. Ephynal, Roche) की 100-200 मिग्रा. प्रतिदिन मुख से दें। इससे Threatened और Habitual गर्भस्त्राव रुक जाता है।

2. प्रोजेस्ट्रोन के योग मुख और पेशीमार्ग से दें। यथा—

सूचीवेध—

1. ल्यूटोस्टैब [Leutostab-Boots] एम्पुल में।

2. प्रोजेस्टिन [Progestin-Organon]

3. युनिप्रोजेस्टिन [Uniprogesterin Unichem] 1-2 मिली।

4. ल्युट्रिन [Leutrin-Hoechst] एम्पुल्स में।

गोलियां—

1. एथिस्टेरोन [Ethisterone-Boots] जीभ के नीचे रखकर चूसें।

2. प्रोजेस्टेरोल (Progesterol Tab., Organon) 5 मिग्रा. की 3 गोलियां प्रति-दिन दें। दो या तीन सप्ताह के अन्तर से तीन बार दें।

3. केलिशयम ग्लुकोनेट योग सिरामार्ग से दें। (देखिये गर्भावस्था में पोषक औषधियां)

### बार बार गर्भपात होना (Recurrent Abortion)

1. गोली सूचीवेध तथा एफीनाल (Tab. & Inj. Ephenal, Roche & Co.) विटामिन 'ई' का उत्तम योग है।

मात्रा—गोली-1 गोली 10 से 100 मिग्रा. की आती है। प्रतिदिन 100 से 200 मिग्रा. तक मुख से देते हैं।

सूचीवेध—1 मिली. एम्पुल आता है। प्रतिदिन पेशीमार्ग से 1 से 3 एम्पुल लगा सकते हैं।

2. टैब. लेप्टाडीन (Tab. Leptaden, Alarsiu & Co.) यह जीवन्ती का योग है। मात्रा—2-3 गोली, 2-3 बार दिन में।

3. प्रोजेस्टेरोन के योग 10 मिग्रा. प्रति सप्ताह दो बार 4 मास तक, पेशीमार्ग से दें।

4. एथिस्टेरोन का सूचीवेध, प्रति सप्ताह दो बार, 4 मास तक देना चाहिये।

5. मल्टीविटामिन्स भी देने चाहिये।

6. फिरग [सिफलिस] की संभावना हो तो उसकी योग्य चिकित्सा करनी चाहिये।

7. टैब. कैरिटोन [चरक]—प्रत्येक गोली 192 मिग्रा. की होती है। यह अध्रकमस्म, गर्भपालरस, गोदन्ती, लोहमस्म, प्रवालपिण्ठी, रौप्यमस्म, रससिन्दूर, शुक्तिमस्म, मु. माथिकमस्म, वंगमस्म का योग है। मात्रा-2-2 गोली, दो बार, जल से। उपयोग—सगर्भावस्था में प्रथम चार मास के गर्भ की रक्षा और पोषण करने के लिये उत्तम है। गर्भावस्था के वमन, अरुचि, दर्द, विवंध, भोजन के बाद पेट मारी होना, घ्वेतप्रदर आदि को दूर करता है। गर्भपात रोकता है। दुर्घ को शुद्ध करता है।

### गर्भवती की प्रातःग्लार्नि [Morning Sickness] तथा अत्यन्त

#### वमन [Hyper-emesis gravidarum]

1. गोली 'एनकोलोक्सिन' [Tab. Ancoloxin-British Drug House] यह 'मैक्लोजीन हाइड्रोक्लोराइड' और 'पाइरीडॉक्सीन' का योग है। मात्रा—रात्रि में सोते समय 1 से 2 गोली देनी चाहिये।

2. गोली पायरीमेसिन (Tab. Pyrimesin-East India Pharmaceutical Works) यह विटामिन बी<sup>6</sup>, बी<sup>1</sup>, सी, फेनीबार्बिटोन का योग है। मात्रा—रात में सोने से पूर्व 1-- गोली देनी चाहिये।

3. गोली एवोमिन [Tab. Avomine, May and Baker Co.] यह 'प्रोमेथाजिन' [Promethazine] का योग है। मात्रा—इसकी प्रत्येक गोली में 25 मिग्रा. और यि आती है। 1-1 गोली प्रति 4 घण्टे से दो बार सकती है।

4. गोली मारजिन [Tab. Marzine-Burrow Welcome & Company] यह 'साइक्लीजिन हाइड्रोक्लोर' का योग है। मात्रा—1-1 गोली दिन में 2 या 3 बार दें।

5. गोली प्रेग्नाडॉक्सिन (Tab. Pregnadoxine) मात्रा—इसकी 1-1 गोली, दिन में 2 या 3 बार दें।

6. गोली व सूचीवेध केटेमेसिन (Tab. & Inj. Katemacin:Raptakos Bret. & Company)—यह औषधि गोली एवं एम्पुल (इन्जेक्शन के लिए) के रूप में मिलती है।

गोली का योग—पाइरीडॉक्सीन, नियासीनामाइन, विटामिन बी<sup>1</sup>, बारबिटोन। एम्पुल का योग—पाइरीडॉक्सीन, विटामिन बी<sup>1</sup>, मद।

मात्रा—1-1 गोली दिन में दो बार दो बार दी जा सकती है अथवा एक-एक एम्पुल दिन में एक या दो बार पेशीमार्ग से सूचीवेध लगाया जाता है। एक एम्पुल में एक मि-

ली. औषधि आती है।

7. वोमिटैब (Vomitaeb-Charak)—सीरप और गोली। सीरप में नींबू, छाल, चंदन, आंवला, कपूर कचरी, सितोपलासव होता है। गोली में सीतोपलादि चूर्ण और कपूर कचरी होते हैं। भावना-चंदन अर्क की। मात्रा—सीरप 1/2-2 चम्मच दिन में 2-3 बार। उपयोग—गर्भावस्था में होने वाली मितली और वमन को शांत करता है। शिशुओं में बदहजमी, वमन, ज्वर, पोलिया को नष्ट करता है।
8. गोली और सूचीवेध लारजेक्टिल (Tab. & Inj. Largectil, May & Baker Co.) यह रासायनिक विधि से निर्मित होती है। इसकी गोली और एम्पूल (इन्जेक्शन के लिए) मिलते हैं। मात्रा—गोली—यह दो प्रकार की आती है—10 मि.ग्रा. तथा 25 मि.ग्रा. की। 1-2 गोली तक दिन में तीन बार दे सकते हैं।  
इन्जेक्शन—इसके लिए 2-5 प्रतिशत विलयन का 2 मि.ली. तथा 1/2 प्रतिशत विलयन का एम्पुल आता है। पेशीमार्ग या सिरामार्ग से 25 से 50 मि.ली. तक 3 या 4 बार दे सकते हैं। सिरामार्ग से दी जाने वाली मात्रा में 10 से 20 मिली. सामान्य लवण-विलयन मिलाकर देना चाहिये।
9. सूचीवेध रेमीकाल (Inj. Remical, Anglo French Drug Co.) यह विटामिन बी१, पाइरीडॉक्सीन और मेथियोनिन का योग है। 1 मिली. का एक एम्पुल या 10 मिली. का 'वायल' (रबड़ की टोपीदार शीशी) आती है। मात्रा—1 से 2 मिली. पेशीमार्ग से दें।

### गर्भावस्था (Pregnancy) तथा स्तन्यपान-काल (Lactation Period) में पोषक और रक्तवर्धक औषधियां

(अ) प्रोटीन की कमी होने पर—

सूचीवेध एवं तरल (Liquid) हाइड्रोप्रोटीन (Hydroprotein, Protein Hydrolysate, Bengal Immunity Co.)—यह प्रोटीन या एमिनोएसिड्स का योग है। ग्रन्ति: प्रोटीन की न्यूनता (Hypo-Proteinaemia) में प्रयोग करते हैं। मात्रा—25 मि.ली. का एम्पुल सूचीवेध सिरामार्ग से दें। तरल औषधि की एक से दो चम्मच, 2-3 बार मुख से सेवन करायें। यह गर्भावस्था व स्तन्यपानकाल में दे सकते हैं।

(2) तरल प्रोटोविट (Protovit, Roche and Co.) यह विटामिन डी, बी१, बी२ बी६, सी, ई, निकोटिनामाइड, पेनथिनोल, वायोटीन का योग है। यह 15 मि.ली. की शीशी में आता है। मात्रा—युवा में 1 मि.ली. (24 बून्द), बच्चों को 1/2 मि.ली. (12 बून्द) तक दिन में, 1 से 3 बार मुख से दूध या फलों का रस मिलाकर दें। गर्भावस्था व स्तन्यपानकाल में दें।

(3) पाऊडर 'प्रोटिन्यूल्स' (Protinules-Alembic and Co.)—इसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन ए, बी और डी होते हैं।

मात्रा—4 से 8 चाय के चम्मच, दूध या फलों के रस में मिलाकर, 2 या 3 बार दिन में दें। यह गर्भावस्था व स्तन्यपानकाल में दे सकते हैं।

(4) पाऊडर सनाट्रोजेन [Sanatrogen-Wulfling & Co.]—यह केमिन, विटामिन बी१, बी१२, फोलिकएसिड, निकोटिनामाइड, केलिशयम पेन्टोथिनेट का योग है। मात्रा—1 से 4 चम्मच, दूध में मिलाकर, दिन में 2 बार।

(आ) केलिशयम की कमी होने पर—

1. डाइकेलिस्प्लेक्स (Syrup Dicalciplex, Khandelwal Lab.)—यह कैलिशयम तथा विटामिनों का योग है। मात्रा—स्त्री को 1-2 चम्मच, दिन में 2 या 3 बार दें तथा बच्चों को कम दें। इसका प्रयोग गर्भावस्था में करते हैं।

2. सीरप ओमिलकाल (Omical, Franco Indian Manufacturer)—यह कैलिशयमफास्फेट, विटामिन डी, ए, बी१२ और सोडियम फ्ल्युराइड का योग है। इसका प्रयोग गर्भावस्था और स्तन्यपानकाल में करते हैं। मात्रा—वयस्कों में 1-2 चम्मच, 2-3 बार दें।

3. गोली कैलिशयम 'डी' रेडोक्सन (Tab. Calcium D, Redoxon, Roche Co.)—यह कैलिशयम, फास्फोरस, विटामिन सी, डी का योग है। इसका प्रयोग गर्भावस्था में करते हैं। मात्रा—1 से 4 गोली, प्रतिदिन दें।

4. सूचीवेध कैल्सोओस्टेलीन विथ विटामिन बी१२ (Inj. Calciostelin with Vitamin B12 Glaxo)—यह कैलिशयम, विटामिन डी और बी१२ का योग है। यह 15 मिली. की रबर की टोपी वाली शीशी में मिलता है। इसका प्रतिदिन, 2 या 3 दिन से, 2 मिली. की मात्रा में, पेशीमार्ग से सूचीवेध लगायें। इसका प्रयोग गर्भावस्था में करते हैं।

5. कैप्सूल थेराग्रेन (Capsule Theragran, Squibb)—यह विटामिन ए, डी, बी१, सी, रिबोफ्लेविन, नियासिनामाइड का योग है। मात्रा—प्रतिदिन 1 से 2 कैप्सूल दें।

6. टैबलेट कैल 'डी' विक (Tab. Cal. D. Vic, International Pharma)—यह कैलिशयम, विटामिन सी और डी का योग है। इसका प्रयोग गर्भावस्था और धात्री-काल में करना चाहिये। मात्रा—वयस्कों में दिन में 2 से 3 गोली।

7. इन्जे. कैलसीविक (Inj. Calcivic I. Pharma)—इसका 10 मि.ग्रा. का एम्पुल सिरामार्ग से, प्रतिदिन या सप्ताह में 2-3 बार दिया जाता है। यह 'कैलिशयम ग्लुकोनेट' का योग है।

8. इन्जे. कैलिशयम ग्लुकोनेट विथ विटामिन सी (Inj. Calcium Gluconate with Vitamin C)—इसमें कैलिशयम, ग्लुकोनेट और विटामिन सी होते हैं। मात्रा—इसका एक एम्पुल 10 मिली. प्रतिदिन या सप्ताह में 2-3 बार दे सकते हैं।

(इ) रक्त की कमी होने पर—

(1) सूचीबंध 'एरीफोल' (Inj. Eryfol, Roche and Co.)—यह विटामिन बी<sup>12</sup> तथा फोलिक एसिड का योग है। मात्रा—इसके 2 मि. ली. के एम्पुल आते हैं। यह पेशीमार्ग से सप्ताह में एक या दो बार लगाते हैं। यह गर्भावस्था में दें।

(2) कैप्सुल औट्रीन (Capsule Autrin, Lederle Co.) यह सियानो कोबाल्टिन (बी<sup>12</sup>), फेरस फ्युमेरेट, एस्कोबिक एसिड और फोलिक एसिड का योग है। मात्रा—प्रतिदिन एक से दो कैप्सुल दें। यह गर्भावस्था में उपयोगी है।

(3) तरल रुब्राटोन (Elixir Rubraton, Squibb)—यह लोहा, विटामिन बी<sup>12</sup>, फोलिक एसिड और मद्द का योग है। मात्रा—वयस्कों में दो चाय के चम्मच, दिन में तीन बार, जल या दूध में मिलाकर दें।

(4) मेनॉल मोल्ट व गोली (Meioll Malt and Tab., Charak) मात्रा—मोल्ट-1-2 चम्मच, दिन में 2-3 बार। गोली-2-2 गोलियाँ, दिन में तीन बार दें। उपयोग—यह उत्तम पौष्टिक टॉनिक है। इसमें विटामिन और खनिज लवण मौजूद है। गर्भावस्थाकालीन रक्ताल्पता, सामान्य दुर्बलता, पेट की गड़बड़ी, मुँह में छाले, अतिग्रस्तता (Hyperacidity) में अच्छा लाभ करता है।

#### प्रसवोत्तर रक्तस्राव (Postnatal Haemorrhage)

[1] गोली अरबोलिन (Tab. Erbolin, Glaxo)—यह सम्पूर्ण अर्गेट का योग है। इसमें अर्गेटोक्सीन और अरगोमेट्रिन होते हैं। इसकी 1 गोली में 0.2 ग्राम अर्गेट होता है। मात्रा—प्रसव के बाद 1 गोली, दिन में 3 बार दे सकते हैं। इससे गर्भाशय का संकोच होता है। अतः प्रसवोत्तर रक्तस्राव, अपूर्ण गर्भपात होना, मासिकधर्म के समय ग्राधिक रक्त जाना, इनमें इसका प्रयोग करते हैं।

[2] गोली मेथरजीन (Tab. Methergin, Sandoz)—1 से 2 गोली प्रतिदिन।

[3] इन्जे. मेथरजीन (Inj. Methergin, Sandoz)—1/2 और 1 मि.ली. एम्पुल। पिरामार्ग से दें।

[4] कैप. अरगोसील (Cap. Ergoseal, Hind)—1 से 3 कैप्सुल प्रतिदिन दें।

[5] इन्जे. पिट्यूट्री, पोस्ट-लोब, [Inj. Pituitary, Post-Lobe, Boots & Co.]—1/2 और 1 मि.ली. के एम्पुल प्रतिवार।

दुर्घटनाधक औषधियाँ

1. टेब. लेप्टाडिन (Tab. Leptaden, Alarsin and Company)—यह जीवन्ती का योग है। मात्रा—2 गोली दिन में, 2 या 3 बार, मुख से दें। यह 1-2 सप्ताह तक देनी चाहिये।

2. इन्जे. फाइजोलेक्टिन (Inj. Physolactin, Glaxo)—यह पोषणिकाग्रन्थि में अग्रिमखण्ड का योग है। इसका 1 से 5 मिली. पेशीमार्ग से इन्जेक्शन देना चाहिये। प्रथम दो दिन 5 मिली, फिर दो दिन 3 मिली. और अन्त में दो दिन 1 मिली का इन्जेक्शन लगाना चाहिये। इस प्रकार 6 दिन तक प्रतिदिन इन्जेक्शन देना चाहिये।

3. टैब. गैलेकोल (चरक)—प्रत्येक गोली 256 मि. ग्रा. की होती है। यह अश्वगंधा, देवदार, गोखरू, गिलोय, जेठीमध, कपास, कौच, अदुसापत्र, कडुनिवपत्र, पिपलामूल, रासना, शतावरी, सौंठ, वच, विदारिक-द का योग है। मात्रा—2 गोली दिन में दो या तीन बार जल से देवें।

4 स्तन को सेंकना चाहिये।

#### दूध का निर्माण बन्द करने वाली औषधियाँ—

(1) इन्जे. इस्टेराइडोल बेन्जोएट (Inj. Oesteridol Benzoate)—इसका 5 मि.ग्रा. प्रतिदिन, 3 से 4 दिन तक इन्जेक्शन दिया जाता है। अथवा—

(2) स्ट्रिलबेस्ट्रोल डाइप्रोपियोनेट (Strilboestrol Dipropionate)-5 मि.ग्रा. 3 बार प्रतिदिन, एक सप्ताह तक देनी चाहिए।

(3) स्तन पर वेलाडोना प्लास्टर लगाना चाहिये। किन्तु इसके प्रयोग के समय शिशु को स्तनपान नहीं कराया जाय।

#### गर्भनिरोधक औषधियाँ (Contraceptive Family Planning)---

(अ) बाह्यप्रयोगार्थ—(योनि में धारण करने के लिए)।

(1) गोली गाइनोमिन (Tab. Gynomin Coates and Cooper Ltd.) यह 'टोलेन' [Tolen-Psulphonso-Dio-Choloro Amide] का योग है। इसके साथ सोडा-बाई-कार्ब और एसिड टार्टेरिक भी मिले होते हैं।

मात्रा—इसकी एक गोली 1-2 ग्राम की आती है, इसे योनि में रखें।

(2) गोली प्लैनीटेब—(Tab. Planitab, Hind)

(3) गोली कानटेब—(Tab. Contab, Sands)

(आ) मुख द्वारा सेवनीय गर्भनिरोधक औषधियाँ (Oral Contraceptives)—विश्वसनीय नहीं हैं।

## आयुर्वेदीय सिद्धौषधियोगसंग्रह

### (1) चूर्ण-कल्प

#### (1) अश्वगंधादियोग-(सि.यो.स.)

घटक-असगंध आर विधारे का चूर्ण 8-8 भाग, बड़ी इलायची का चूर्ण 2 भाग, कुन्जकुटाण्डकपालचूर्ण 2 भाग, वंगभस्म 1 भाग, मिश्री चूर्ण 8 भाग। सबको एकत्र मिलाकर रख लें। मात्रा-~4 ग्राम, प्रातः सायम्, गोदुग्ध से। उपयोग-श्वेतप्रदर में उत्तम योग है।

#### (2) उत्पलादिचूर्ण (मै. र.)

घटक-लाल कमल की जड़, लाल कपास की जड़, कनेर की जड़, लाल जपाकुमुम के मूल, बकुल की जड़, धातकी, सफेद जीरा, लाल चंदन। समभाग। नि. वि. चूर्ण कर लें। मात्रा-3 ग्राम। अनुपान-चावल का धोवन। उपयोग-रक्तप्रदर, रक्तयुक्त-मूत्र, योनिशूल, कटिशूल, कुक्षिशूल।

#### (3) एलदिचूर्ण (यो. र.)

अधिकार-प्रदर चिकित्सा।  
घटक-इलायची, शालपर्णी, द्राक्षा, खस, कुट्टको, लाल चंदन, काला नमक, सारिवा, लोध-समभाग चूर्ण। मात्रा-3-6 ग्राम। उपयोग-वातजप्रदर में (गाय के ढही के साथ लेने से), पित्तज व रक्तप्रदर में (मधु से)।

#### (4) कशोर्वादिचूर्ण (मै. र.)

अधिकार-गर्भिणी रोग।  
घटक-कशेरू, सिंधाड़ा, कमलकेशर, नीलकमल, मुदग्पर्णी, मुलेठी-समभाग। मात्रा-5 से 10 ग्राम। प्र. वि.-गुग्ध से पीसकर मिश्री मिलाकर पीवें। उपयोग-गर्भिणी का मवकल्ल [गर्भशूल], गर्भस्राव को रोकता है। इसके सेवन के बाद दूध-भात खायें।

#### (5) चंदनादिचूर्ण (मै. र.)

अधिकार-प्रदर (पैतिक)।  
घटक-लाल चंदन, जटामांसी, पठानी लोध, खस, कमलकेशर, नागकेशर, बिल्व नागरमोथा, शब्दकर, नेत्रबाला, पाठा, कुट्जबीज व छाल, सोंठ, अतीस, रसौत, आम की मुठली, जामुन की गुठली, मोचरस, नीलकमल, मंजीठ, छोटी इलायची, अनारदाने, घाय के फूल (24 द्रव्य)। मात्रा-3-6 ग्राम। मधु मिलाकर तण्डुलोदक के अनुपान से। उपयोग-चार प्रकार के प्रदर, भयंकर रक्तातिसार, रक्तार्श, रक्तपित्त। यह योग पैतिक प्रदर में विशेष लाभप्रद है।

#### 6. जीवनीयगणचूर्णं (शा.सं.)

अधिकार-वन्ध्यायोनिरोग।  
घटक-काकोली, धीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, जीवन्ती, मुल-हठी, मृदगपर्णी, माषपर्णी (10 द्रव्य)। समभाग। मात्रा-3 ग्राम, मन्दोषण दुग्ध से।

उपयोग-स्वादिष्ट, मधुर, गर्भस्थापक, भारी, स्तन्योत्पादक, शरीर पुष्टिकारक, वृथ्य, स्तनग्ध, शीतल, तृष्णानाशक, रक्तपित्त, क्षय, शोष, ज्वर, दाह, वायुरोगों में हितकर है।

(7) त्रिकट्वादिचूर्णं (यो.र.)। अधिकार-सूतिकारोग (मवकल्ल)

घटक-सोंठ, मरिच, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, धनिया। प्र.वि.-पुराने गुड़ से 3-6 ग्राम। उपयोग-मवकल्लशूल।

(8) तृणाकान्तादिचूर्णं (चिकित्सादर्श)। अधिकार-प्रदररोग।

घटक-तृष्णाकान्त (कहरवा) 1 भाग, दुधपाषाण (संगजराहत) 2 भाग, इन्द्र जौ 2 भाग और खूनखराबा 2 भाग। प्रत्येक का कपड़छान चूर्ण कर लें। मात्रा-2 से 4 ग्राम। अनुपान-तण्डुलोदक, मिश्रीयुक्त। उपयोग-रक्तप्रदर में अधिक लाभप्रद है।

(9) दारूकादि चूर्णं (सि. भे. म. मा.)। अधिकार-प्रदररोग।

घटक-विधारा की जड़, लोध, समुद्रशोप, समभाग लेकर, कपड़छान चूर्ण कर लें। सब के बराबर मिश्री मिलावें। मात्रा-2 से 6 ग्राम। गोदुग्ध से। उपयोग-श्वेतप्रदर में अत्यन्त उपयोगी है।

(10) पुष्यानुगचूर्ण [च. चि. 30, अ. हृ. उ. 34, चक्रदत्त, मै. र.]

अधिकार-प्रदर [पित्तज]

घटक-पाठा, जामुन की गुठली, आम की गुठली, पाषाणभेद, रसौत, अम्बृष्टा [पाठा-भेद], मोचरस, समंगा [मंजीठ], कुट्ज की छाल, वाह्निक [केशर], अतीस, कच्चे बेल की गुदी, मोथा, लोध, गेरू, कट्वंग [सोनापाठा के मूल की छाल], मरिच, सोंठ, मुनक्का, लालचंदन, कायफल, इन्द्रजी, अनन्तमूल, घाय के फूल, मुलेठी, अर्जुन की छाल [कुल 26 द्रव्य]। समभाग महीन कपड़छान चूर्ण बना लें। मात्रा-3-6 ग्राम। प्र.वि.-मधु के साथ चाटकर, चावल के धोवन से पीयें। उपयोग-रक्तार्श, रक्तातिसार, योनिदोष, रजोदोष, योनि से श्वेत-पीत, नील-श्याव और अरुण वर्ण के स्राव में हिरकर है। विशेष-1. यह चूर्ण आत्रेय द्वारा पूजित है। 2 उपर्युक्त सब द्रव्य पुष्यनक्षत्र में उखाड़ने का समादेश है, अतः इसे 'पुष्यानुग' चूर्ण कहते हैं।

पाठभेद-1. वागभट मरिच और मृद्विका के स्थान पर क्रमशः माचिक [देवदार] और मधूक [महुआ] बनाते हैं।

(2) चक्रदत्त में त्रिफला और कमल की केशर-दो का अधिक उत्तेज है। किन्तु कायफल और कुट्ज की छाल नहीं लिखा है, इस प्रकार कुल द्रव्य 26 ही बताये हैं।

(3) चक्रदत्त में लिखा है-'अम्बृष्टा दक्षिणे रुयाता गृह्णन्त्यन्ये तु लक्ष्मणम्।' अर्थात् कुछ लोग अम्बृष्टा के स्थान पर लक्ष्मणा डालते हैं।

(4) शिवदाससेन अम्बृष्टा के अभाव में पाठा द्विगुणमात्रा में डालने का विधान बताते हैं।

(5) मै. र. में चक्रदत्तोक्त पाठ है, किन्तु त्रिफला के स्थान पर कायफल पढ़ा है।

(11) प्रदरान्तकचूर्ण (चिकित्सादर्श)। अधिकार—प्रदररोग।

घटक—पुष्यानुग चूर्ण । भाग और सालमिश्री पंजेदार 1/2 भाग और बबूल की हरी फली 1/3 भाग मिजाह कचूर्ण करें। मात्रा 3-6 ग्राम। उपयोग—श्वेतप्रदर।

(12) प्रदररिपुचूर्ण [चिकित्सादर्श]। अधिकार—प्रदररोग।

घटक—कोडिया लोहबान और सफेद जीरा समभाग लेकर कपड़छान चूर्ण करले। मात्रा—1-6 ग्राम। पके केले में बोर-बोर कर खाएं, प्रातः सायम्। उपयोग—रक्तप्रदर।

(13) प्रदरहरचूर्ण (चिकित्सादर्श)—अधिकार प्रदररोग।

घटक—गूलर की छाल, गूलर का कच्चा फल, अर्जुन की छाल, अशोक की छाल बबूल की कच्ची फली, शतावरी और खस। समभाग लेकर, कपड़छान चूर्ण बनालें। मात्रा—4 ग्राम। अनुपान—मधु से चाटें, फिर तण्डुलोदक मिश्री मिलाकर पीयें।

(14) प्रदरारिचूर्ण [चिकित्सादर्श]। अधिकार—प्रदररोग।

घटक—पठानी लोध, सेलखड़ी (दुग्धपाषाण), गूलर का कच्चा फल, छोटी इलायची के बीज, खूनखराबा, माजूफल, धाय के फूल, चिनियाँगोंद, अशोक की अन्तरछाल, मोलसिरी की छाल, बबूल की कोमल कच्ची फली। समभाग लेकर कपड़छान चूर्ण करलें। सबके बराबर मिश्री मिलावें। मात्रा—1 से 6 ग्राम। अनुपान—दूध से या तण्डुलोदक से। उपयोग—श्वेतप्रदर।

(15) लवंगादिचूर्ण (भै.र.) अधिकार—गर्भिणी चिकित्सा।

घटक—लोंग, शुद्ध टकरा, मोथा, धाय के फूल, बेलगिरी, धनिया, जायफल, राल, मोक, अनारदाने, श्वेतजीरा, सैधव, मोचरस, नीलोत्पल, रमैत, अच्छकभस्म, वंगभस्म, मंजीठ, रक्तचन्दन, चव्य, अतीस, काकडासींगी, खीर, नेत्रबाला। समभाग। भावमा—भागरे के रस से तीन दिन तक। मात्रा—1 से 3 ग्राम। अनुपान—बकरी का दूध। उपयोग—संग्रहग्रहणी, अनेक वर्ष का अतिसार, ज्वर, आमातिसार, रक्तातिसार, शूल, मोथ नाशक है।

(16) वचादिकल्क (च. द.)। अधिकार—योनिव्यापद।

घटक—दुविया वच, कालाजीरा, सफेदजीरा, पिप्पली, अङूसा, सेंधानमक, अजमोदा, जवाखार, चित्रक की जड़। समभात्रा चूर्ण। मात्रा—3 ग्राम। प्र.वि.—चूर्ण को धी में भूनकर, सुरा में घोलकर खिलावें। उपयोग—योनिशूल, पाश्वर्शूल, ह्रदोग, गुलम, अर्श।

[2] क्वाथ, क्षीरपाक, कांजिक

(1) अमृतादिक्वाथ—(च.द., भै.र.) पर्याय—‘सूतिकादशमूल’। अधिकार सूतिकारोग।

घटक—गिरोय, सौंठ, सहचरमूल, नागरमोथा, मद्रोत्कट (तृणविशेष—गंध प्रसारणी), लघुपञ्चमूल (गालपर्णी, पृश्निपर्णी, बड़ीकटेरी, छोटी कटेरी, गोखरू), मोथा।

मात्रा—2 कर्ष। नि. वि.—16 गुने जल में पकाकर चतुर्थीशेष रखें। प्र.वि.-क्वाथ में 10 ग्राम मधु मिलाकर पीयें। उपयोग—सूतिकारोग।

(2) अशोकवल्कलक्वाथ—(च.द.)।

अधिकार—प्रदर। घटक—अशोक छाल 1 कर्ष। दूध 16 तोला, जल 64 तोला। नि.वि.—पकाकर 16 तोला शेष रखें। प्र.वि.—पान। [अल्पबलस्त्रगा में उत्तम मात्रा से आधा प्रमाण देवें।] उपयोग—तीव्र अमृदरनाशक है। [रक्तप्रदर]।

(3) उत्पलादिगणक्षीरपाक—[यो. र.]। अधिकार—गर्भपात।

घटक—नीलकमल, लालकमल, कुमुद, रक्तकुमुद, श्वेतकमल, मुलेठी। समभाग। प्र.वि.—क्षीरपाक के रूप में।

(4) एरण्डमूलादिक्वाथ—[भै.र.]। अधिकार—गर्भिणीरोग।

घटक—एरण्डमूल, गिलोय, मंजीठ, लालचन्दन, देवदार, पद्माख। मात्रा—2 कर्ष। उपयोग—गर्भिणी का ज्वर।

(5) कशेवादिपय: [क्षीरपाक] [सु., च.द., भै.र.]। अधिकार—गर्भिणीरोग।

घटक—केशरू, सिंधाड़ा, जीवनीयगण के द्रव्य, कमल, नीलकमल एरडमूल, शतावरी। समभाग। मात्रा—2 कर्ष। नि. वि.—क्षीरपाक विधि से दुग्ध पकावें। शर्करा मिलाकर पीयें। उपयोग—गर्भिणी का उदीर्णवेग (पतनशील) गर्भ स्थिर हो जाता है।

(6) गुडूच्यादिक्वाथधावन—[यो. र.]। अधिकार—योनिव्यापद।

घटक—गुडूची, आंवला, हरड़, बहेड़ा, दंतीमूल। प्र. वि.—क्वाथ से योनिप्रक्षात्वन करें। उपयोग—योनिकण्डनाशक है।

(7) चंदनादिक्वाथ—भै. र.।

घटक—लालचन्दन, अनन्तमूल, लोध, किसमिस। क्वाथ में मिश्री मिलाकर पीयें। उपयोग—गर्भिणी के ज्वर।

(8) तिलादिक्वाथ—यो. र.।

घटक—काले तिल, लिसोड़ा और कालाजीरा (कलौंजी)। समान भाग। नि. वि.—विधिपूर्वक क्वाथ बना लें। प्र.वि.—क्वाथ में गुड़ मिलाकर पिलावें। मात्रा—20 ग्राम। उपयोग—रजारोब में दें।

(9) तृणपंचमूलक्षीरपाक—यो.र.।

घटक—शालिघान की जड़, ईख की जड़, कुश की जड़, काश की जड़, शर (नरसर) की जड़। प्र. वि.—क्षीरपाक विधि से। उपयोग—तृणणा, दाह, रक्तपित, मूत्रावरोध।

(10) दशमूलक्वाथ (भै. र., च.द.)। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—बेल, अरलू, गंभारी, पाढ़ल, अरणि (इनके मूल की छाल), शालपर्णी, पृश्निपर्णी, छोटी कटेरी, बड़ीकटेरी, गोक्षुर (इनका पंचाग लेवें)। नि.वि.—16 गुने जल पृश्निपर्णी, छोटी कटेरी, बड़ीकटेरी, गोक्षुर (इनका पंचाग लेवें)। नि.वि.—16 गुने जल

में पकाकर चतुर्थीश शेष रख लें। मात्रा—1-2 कर्ष। प्र.वि. क्वाथ में एक तोला धृत मिलाकर मन्दोषण रूप में पिलावें। उपयोग—सूतिकारोग।

#### (11) दावर्यादिक्वाथ—च.द., भै.र।

घटक—दारुहल्दी, रसींत, नागरमोथा, चिरायता, बेलगिरी, शु. भिलावा (ओर कैरव=कुमुद)। समप्रभाग में लेकर यवकूटकर रख लेवें। मात्रा—1 से 2 कर्ष। नि.वि.—आठगुने जल में पकाकर चतुर्थीश शेष रखें। प्र.वि.—छानकर, शीतल होने पर मधु मिलाकर पिलावें। उपयोग—पीत, कृष्ण, अरुण, रक्त और श्वेत वर्ण का अतिप्रबल प्रदर शान्त होता है।

**विशेष**—1. मुख में धृत लगाकर पान करना चाहिये, अन्यथा छाले हो जाते हैं।

2. यह योग प्रजनन-स्थान का शोधन करता है। साथ ही व्रणरोपक है।

गर्भाशय के व्रण और कैंसर में चन्द्रप्रभावटी के साथ देना चाहिये।

#### (12) देवदार्वादिक्वाथ—(भै.र., यो.र., शा.सं.)। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—देवदारु, वचा, कूठ, पीपल, सौंठ, चिरायता, कायफल, मोथा, कुटकी, बनिया, हरड़, गजपीपल, छोटी कटेरी, गोखरू, घमासा, बड़ी कटेरी, अतीस, गिलोय, काकडासींगी, कालाजीरा-समभाग। मात्रा—1 से 2 कर्ष। नि.वि.—यथाविधि 16 गुने जल में पकावें। अष्टामांस शेष रखें। प्र.वि.—क्वाथ में सेंधानमक 500 मिग्रा. व हींग 250 मिग्रा. मिलाकर पीयें। उपयोग—सूतिका के शूल, कास, ज्वर, इवास, मूच्छा, प्रीर-कम्पन, शिर की पीड़ा, प्रलाप, तृष्णा, दाह, तन्द्रा, अतिसार, वमन व वातपित्त-कफजन्य सूतिकारोग नष्ट होते हैं। सूतिकारोग की उत्तम औषधि हैं—

‘कषायो देवदार्वादिः सूतायाः परमौषधम्।’

#### (13) निर्गुण्ड्यादिक्वाथ—यो.र।

अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—निर्गुण्डी, लहसुन, सौंठ। समभाग। प्र.वि.—क्वाथ में पिप्पली चूर्ण 250 से 500 मिग्रा. प्रक्षेप देकर पीवें। उपयोग—कफ-वातज सूतिकारोग में उत्तम है।

#### (14) न्यग्रोधादिगणक्वाथ—[शा.सं., सि.यो.सं.]

अधिकार—योनिरोग, योनिव्रण (योनिव्यापद)। घटक—बड़ की छाल, पाखर की छाल, आंवले की छाल, बेत की छाल, तुन [तुणी] की छाल, मुलेठी, चिराँजी, लोध, पठानी लोध, गूलर की छाल, पीपल की छाल, महुआ, पारस पीपल की छाल, सलई की छाल, तेंदू की छाल, छोटे और बड़े जामुन की छाल, आम की छाल, हरड़, कदंब की छाल, अर्जुन की छाल, शु. भिलावा। समभाग (23 द्रव्य)। प्र.वि.—इनका यथा लाभ संग्रह करके काढ़ा बनाकर पीना चाहिये। मात्रा—1-2 कर्ष। जल 16 कर्ष, शेष 2 कर्ष। उपयोग—यह अत्यन्त ग्राही, व्रणरोपक, भग्न-सधान करने वाला, योनिदोषहर, दाह, मद, मेह और विष को दूर करने वाला है। विशेष—इस गण से सिद्ध तैल का पिन्न धारण किया जाता है।

#### 15. पिप्पल्यादिक्वाथ—(यो.र.)। अधिकार—सूतिकारोग, मवकल्लशूल।

घटक—पीपल, पीपलामूल, मरिच, गजपीपल, सौंठ, चित्रक, चव्य, रेणुका, मूर्वा, इलायची, अजमोदा, सरसों, शुद्धहींग, भारंगी, पाठा, इन्द्रजी, जीरा, बकायन, अतीस, कुटकी, विडंग, समभाग। प्र.वि.—क्वाथपान। मात्रा—1 से 2 कर्ष। उपयोग—मक्कलाशूल, गुल्म (सेंधानमक 500 मिग्रा. क्वाथ में मिलाकर पीयें), कफ, वातधन, शूल, ज्वरनाशक, अग्निदीपक, आमपाचक।

#### 16. भार्यादिक्वाथ (सु., च.द.)

अधिकार—स्तन्यदुष्टि (स्तनरोग)

घटक—भारंगी, देवदारु, चच, पाठा, अतीस। मात्रा—1 से 2 कर्ष। क्वाथ बनाकर ले। उपयोग—स्तन्य दूषित होने पर सेवन करें।

#### 17. महारास्तादिक्वाथ—(शा.स.)। घटक—क्वाथ्य-2 भाग राना, 1 भाग-

मव मिलाकर निम्न औषधियाँ-जवासा, बला, एरण्ड, देवदारु, कचुर, चच, बाना, सौंठ, हरड़, चव्य, मुस्ता, पुनर्नवा, गिलोय, विधारा, सौफ, गोखरू, असगंध, अतीस, अमलतास, शतावर, पीपर, पीयांवासा, धनिया, कटेरी, बड़ी कटेरी [समभाग]। प्रक्षेप—शुष्ठी चूर्ण, पिप्पली चूर्ण, योगराजगुग्गुलु, अजमोदादिचूर्ण, एरण्ड तैल। प्रयोग—क्वाथपान। मात्रा—10-20 ग्राम। उपयोग—सर्वाङ्गकम्प, कुञ्जत्व, पक्षाधात, अववाहुक, गृध्रसी, आमवात, श्लीपद, अपतानक, अन्त्रवृद्धि, आधमान, जंधा—जानुगत वात, अदित, शुक्ररोग, मेहरोग, मन्ध्या, योनिरोग। गर्भकारक है।

#### 18. मधूकादिक्वाथ (भै.र.)। अधिकार—गर्भिणीरोग।

घटक—महुआ, लालचन्दन, खस, सारिवा, कमलपत्र, शर्करा व मधु मिलाकर पीयें। उपयोग—गर्भिणीज्वर।

#### 19. वज्रकांजिक—(च.द., भै.र.) अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, सौंठ, अजवायन, श्वेतजीरा, कालाजीरा, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, विडनमक, सौवर्चल लवण (कालानमक)। समभाग चूर्ण। उपयुक्त चूर्ण का 2 कर्ष, 2 कांजी 16 कर्ष, 3. जल 64 कर्ष। नि.वि.—कांजी मात्र येष रहने तक पकने दें। फिर छान कर पिलावें। मात्रा—4 से 6 कर्ष। प्र.वि.—पान। उपयोग—आमदोष (पाठ आमवात) नाशक, वृद्ध्य, कफधन, अग्निदीपक, मवकल्लशूल-नाशक, दुग्धवर्धक है। विशेष—इसे क्षीरपाकविधि से पकाते हैं।

#### 20. वेणपर्वादिक्वाथ (चिकित्सादर्श)—अधिकार—कष्टार्तव, नव्वार्तव।

घटक—बांस के पोरवें (गांठे) 20 ग्राम और सोयाबीज 40 ग्राम लेकर 1 लीटर जल में उबालें, अष्टमांश शेष रहने पर गुड़ 25 ग्राम मिलाकर पिलावें। उपयोग—रजोरोध में दें।

#### 21. लज्जाल्वादि हिमकषाय (यो.र.)। अधिकार—गर्भपात।

घटक—लज्जालु, धाय के फूल, नीलकमल और लोध। इसका हिमकषाय बनाकर

मधु मिलाकर पिलावें।

उपयोग—गर्भपात्रोधक है।

### (22) हीबेरादिक्वाथ [प्रथम]—[च.द.] अधिकार-सूतिकारोग।

घटक—सुगंधबाला, अमलतास का गूदा, लालचन्दन, खरेटी, धनिया, गुडूची, नागरमोथा, खस, यवासा, पितपापड़ा, अतीस। समभाग। नि.वि.—आठगुने जल में पकाकर चतुर्थीश शेष रखें। मात्रा—1 से 2 कर्ष। प्र.वि.—पात। उपयोग—ग्रनेक दोषों से उत्पन्न अतिसार, रक्तस्राव, ज्वर, सूतिकारोग।

### (23) हीबेरादिक्वाथ [द्वितीय] [यो.र.]—अधिकार-गर्भपात।

घटक—सुगंधबाला, अतीस, मोथा, मोचरस, इन्द्रजौ,। समभाग। प्र.वि.—क्वाय पात। उपयोग—गर्भचलित हो गया हो, प्रदर, उदरश्वेदता।

### (24) सहचरादिक्वाथ—(च.द., भै.र.) अधिकार-सूतिकारोग।

घटक—कटसरैया, पोखरमूल, बैत की जड़, विकंकत, देवदाह और कुलथी। समभाग। नि.वि.—अष्टगुण जल में पकाकर चतुर्थीश शेष रखें। मात्रा—2 कर्ष। प्र.वि.—क्वाय में सेवानमक 500 मिग्रा., भूनीहींग 250 मिग्रा. मिलाकर पिलावें। उपयोग—सूतिकारोग।

### [ 3 ] अवलेह, पाक, गुड़, मादक

#### 1. जीरकादिमोदक [ 1 ] (यो.र.) अधिकार-योनिव्यापत्।

घटक—सफेद जीरा, कालाजीरा, पीपल, सुपवी (छोटा करेला या काला जीरा), सुरभि [राल या आयत्तल], वच, अडूसा, सेवानमक, यवक्षार, अजवायन। इनका समभाग चूर्ण, धी में भूनकर शर्करा मिलाकर मोदक बनावें। मात्रा—2 कर्ष। उपयोग—योनिरोग।

#### 2. जीरकादिमोदक [ 2 ] भै.र.। अधिकार-सूतिकारोग।

घटक—सफेद जीरा 2 पल; सोंठ व धनिया 3-3 पल; सौंफ, अजवायन व काला जीरा 1-1 पल। सबका चूर्ण बनावें, फिर गोदुग्ध 2 प्रस्थ में डालकर खोवा बनावें तथा 3 पल धृत में भून लें। उसे 50 पल शर्करा की चासनी में डालकर मृदु अग्नि से पकावें, गाढ़ा होने पर प्रक्षेप डालें। प्रक्षेपद्रव्य—सोंठ, मरिच, पीपल, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, विडंग, चव्य, चित्रक, मोथा, लौंग। प्रत्येक 1-1 पल। पाक में मिलाकर मोदक बनालें। मात्रा—1/2 से 2 कर्ष। मंदोषण गुरध से। उपयोग—सब स्त्रीरोग, सूतिकारोग, ग्रहणीरोग नाशक, अग्निदीपक।

#### 3. जीरकावलेह (यो.र.) अधिकार-प्रदर-चिकित्सा।

घटक—पाकार्थ-सफेद जीरा । प्रस्थ

गोदुग्ध—2 आड़क [प्रस्थ]

लोबचूर्ण—1/4 प्रस्थ

धृत—1/4 प्रस्थ

सबको मिलाकर अवलेह पाक करें।

गर्करा—। प्रस्थ की चासनी मिलाकर पकावें। गाढ़ा हो जाने पर निम्न प्रक्षेप डालें।

प्रक्षेप—दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, पीपल, सोंठ, जीरा, नागरमोथा, सुगंधबाला, अनारदाना, रसोंत, धनिया, हल्दी, कटसरैया, वंशलोचन, तवाजीर। प्रत्येक 1/2-1/2 पल, श्लक्षण चूर्ण। मात्रा—1/2 कर्ष। उपयोग—प्रमेह, प्रदर, ज्वर, अनचि, श्वास, तृष्णा, दाह, ध्यनाशक और बल्य।

#### 4. पंचजीरकपाक (यो.र.)

अधिकार-सूतिकारोग।

घटक—जीरा, बड़ाजीरा, सौंफ, सोया, अजवायन, अमोद, सोंठ, धनिया, मेथी, पीपल, पीपलामूल, चित्रकमूल, हाऊबेर, विदारीकंद के फल का चूर्ण, कूठ, कम्पीलक, प्रत्येक 1-1 पल, पुराना गुड़ 100 पल, दूध 2 प्रस्थ, धृत। कुडब। नि.वि.—पाक—विधि से पाक सिद्ध करें। मात्रा—2 कर्ष। उपयोग—सूतिकारोग, योनियोग, ज्वर, ध्यय, कास, श्वास, पाण्डु, काश्य, वातरोग।

#### 5. पञ्चजीरक [गुड़—] च.द., भै.र.]

अधिकार-सूतिकारोग।

घटक—जीरा, हाऊबेर, धनिया, सौंफ, देवदाह, वेर के सूखे फल, अजमायन, छोटी राई [वाष्पिका], राई, हिंगुपत्री, कसोटी, पिपली, पिपलामूल, अजवायन, चित्रकमूल, —प्रत्येक 1-1 पल। 2. कसेह, सोंठ, कूठ, अजवायन प्रत्येक 4-4 पल। 3. गुड़ 100 पल। 4. धृत 1 प्रस्थ। 5. दूध 5 प्रस्थ। नि.वि.—सबको मिलाकर, मृदु अग्नि से पकाकर गुड़ सिद्ध करें, पहले गुड़, धृत व दूध को पकावें। ठीक से पक जाने पर जब वह कलधी से न लगने लगे तो शेष प्रौष्ठविधियों के चूर्ण का प्रक्षेप देवें। प्र.वि.—मक्खण। मात्रा—2 से 5 कर्ष। उपयोग—सूतिकारोग, गर्भ की इच्छा वाली स्त्रियों व वातजरोगों में [वातप्रको-पजन्य गर्भ की क्षीणावस्था में] बृहण करने के लिये उपयोगी है। यह 20<sup>३</sup> योनिरोगों, कास, श्वास, ज्वर, ध्यय, हल्मीमक, पाण्डुरोग, दीर्घन्य, मूत्रकच्छु को नष्ट करता है। इसके नित्य सेवन से स्त्रिया ऊचे कुच तथा कमलपत्र के समान विशाल नेत्रों वाली सुन्दर और श्रीयुक्त हो जाती है।

#### 6. पुष्करलेह—[भै.र.] अधिकार-प्रदर

घटक—रसोंत, वंशलोचन, काकडारीगी, चित्रक, मुलेठी, धनिया, तालीमपत्र, कत्था सफेदजीरा, कालाजीरा, निशोथ, बला, दंती, सोंठ, मिर्च पीपल। मिलित-आधा पल जिनाजीत-आधापत। शहद-4 पल। जावित्री, लौंग, ककोत, मुनक्का, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, नागकेशर, छहारे का चूर्ण। प्रत्येक 1-1 कर्ष। नि.वि.—सबको मिलाकर स्त्रियों भाँड या कांचपात्र में रख देवें। मात्रा—1/2-1 कर्ष। अनुपान-देशकाना लुमार। प्र.वि.—अवलेहन। उपयोग—सर्व उपद्रवयुक्त व सर्वदोषजप्रदर, दृढ़ज व चिरनुमार। जीरकावलेहन। उपयोग—सर्व उपद्रवयुक्त व सर्वदोषजप्रदर, दृढ़ज व चिरनुमार। जीरीर के बल कालीन रक्तपित्त, श्वास, कास, अम्लपित्त, ध्ययरोग, सर्वरोगनाशक। जीरीर के बल वर्ण व अग्नि को बढ़ाने वाला है।

**7. बत्तीसा के लड्डू—** (यूनानी सिद्धयोगसंग्रह) यह यूनानी मिश्रत योग है। और बहुत उपयोगी है। **अधिकार-श्वेतप्रदर।**

घटक-वायविडंग, छोटी माई, बड़ी माई, छोटा गोखरू, सफेद तोदरी, लालतोदरी, सफेद बहमन, लाल बहमन, काली मूसली, सफेद मूसली, मूसला समल, पिस्ता का फल, सुपारी का फूल, धवई का फूल (गुल धावा), सालमिश्री, सकाकुलमिश्री, चुनियागोंद, मैदा लकड़ी, तज, तालमखाना, मजीठ, छोटी इलायची, सतावर, पाषाणभेद, हरा माजू फल, चिकनी सुपारी, सिरियारी के बीज (तुरुम सरबाली) गुजराती बीजबन्द, समुन्द्र सोख, लोध पठानी, संगजराहत (धीया पथर), इमली के बीज, बहुफली-प्रत्येक 1 तो। धी में भूना हुआ बबूल का गोंद-1 पाव, मीठे बादाम की गिरी, पिस्ता की गिरी-प्रत्येक एक छटांक, नारियल की गिरी खोपरा आधा पाव, छुहारा, सफेद मखाना सिंधाड़े का आटा, गेहूं का आटा, मूंग की मोगर का आटा-चारों धी में भूने हुए प्रत्येक एक पाव, चीनी 2 सेर। नि. वि.-चीनी की चाशनी बनाकर शेष सब द्रव्यों का कपड़छन चूर्ण करके मिलाएं और 1-1 छटांक के लड्डू बनाकर रखें। मात्रा-प्रतिदिन 1 लड्डू कलेवा के रूप में। गुण—यह बढ़े हुए योनिस्त्राव और शुक्रमेह को रोकता है। प्रसवोत्तर निर्बलता को दूर करने में लाभप्रद है। श्वेतप्रदर में अच्छा प्रभाव दिखाई देता है।

### **8. भद्रोत्कटाद्यवलेह (मैर.)      अधिकार-सूतिकारोग।**

घटक—क्वाथार्थ-भद्रोत्कट 1 तुला, जल 2 द्रोण, शेष 2 प्रस्थ, मिश्री 30 पल। प्रक्षेप-कूड़े की छाल, धनिया, मोक्षक, खस, बेलगिरी, मोचरस, पिप्पली, कालीमिर्च, बला अतिवला, जटामांसी, नेत्रवाला, जमासा। प्रत्येक 1-1 पल। नि. वि.-क्वाथ में मिश्री डालकर पकायें, गाढ़ा होने पर प्रक्षेप मिलाकर रख देवें। मात्रा-6 माशा। अनुपान-जल। उपयोग-संग्रहयहणी, दारुण सूतिकारोग, शूल, आनाह, अग्निमांद्य।

### **9. मधुकाद्यवलेह (मैर.)      अधिकार-प्रदर।**

घटक-1. प्रक्षेपार्थद्रव्य (मिलित चूर्ण) 13 कर्ष। 2. शर्करा 26 कर्ष। 3. शतावरी स्वरस 1/2 प्रस्थ।

प्रक्षेपार्थ द्रव्य—मुलेठी, लाक्षा, लालाकमल, रसौत, कुश की जड़, खस की जड़, बला, अदूसा, वेर की गुँली, मोथा, बेलगिरी, मोचरस, दारुहरिद्रा, धाय के फूल, अ-शोक की छाल, मुनक्का कलीयुक्त जपापुष्प, आम के पत्ते, कोमल नलिनीपत्र, शतावरी, विदारी, रजतभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म (26 द्रव्य)। प्रत्येक 1/2-1/2 कर्ष। नि. वि. प्रथम शतावरी के स्वरस में शर्करा मिलाकर दो तार की चासनी बना लें। फिर प्रक्षेप द्रव्यका चूर्ण मिलाकर शीतल होने पर एक पलमधु डालकर रख देवें। मात्रा-3-6 माशा। अनुपान-मन्दोषण दुर्घय या जल। प्र. वि.-चाटना। उपयोग—रक्त-पीत-कृष्ण-श्वेत वर्ण, वेदनायुक्त व दुस्तर प्रदर का नाशक, योनिशूल, कुक्षिशूल, भयंकर व-

स्तिशूल, रक्तातिसार, रक्तार्श, चिरकारी रक्तपित्त, सर्वमूत्ररोग, हरतपाद, विदाह, मूच्छी वमन, भ्रम। विशेष यह महादेव द्वारा बताया गया है।

### **10. संविदासार (मैर.)      अधिकार-योनिव्याप्त।**

घटक व नि. वि.—संविदा (गांजा) के मंजरी के पत्ते के स्वरस या ब्रावथ को वस्त्र से छानकर जलस्वेदनयंत्र से गाढ़ा (घन) बनावें। मात्रा-1/4 से 1/2 र। दो या तीन बार दें। प्र. वि.-ग्राभ्यंतर सेवन, फलवर्ति। उपयोग-योनिशूल, जरायुज्ञूल, 1 र. प्रमाण की फलवर्ति योनि में रखने से योनिव्याप्तनाशक है। आमवात, तमक-श्वास, आयाम रोग नष्ट होते हैं। विशेष-गहननाश ने बतायी है—

[ 1-12-13 ] **सौभाग्यशुण्ठी**-इनके निम्न तीन योग मिलते हैं—  
अधिकार—सूतिकारोग।

प्रथम योग—घटक व नि. वि.-गुण्ठीचूर्ण । पल, गोदूध 2 प्रस्थ मिलाकर खोवा होने तक पकायें। फिर गोदूध 8 पल मिलाकर लाल होने तक पुनः पकायें। मिश्री 30 पल, जल-आवश्यकतानुसार मिलाकर चासनी बनावें। चासनी में उपर्युक्त खोवा मिलाकर पुनः पकायें। गाढ़ा होने पर प्रक्षेपद्रव्य मिलाकर रख देवें। प्रक्षेप-कसेरु, मिश्राढ़ा, वराट (कमलगहा), मोथा, सफेदजीरा, कालाजीरा, जायफल, जाविकी, लौंग, छारछरीला, नामकेशर, तेजपत्र, दालचीनी, कचूर, धाय के फूल, छोटी इलायची, सौंफ, धनिया, गजपीपल, छोटी पीपल, काली मरिच, शतावर। प्रत्येक 2-2 कर्ष। लौहभस्म + अभ्रकभस्म 1-1 पल। मात्रा-1/2 से 2 तो। अनुपान-मन्दोषण दुर्घय या जल। उपयोग—अग्नि को बढ़ाती है। सूतिकारोगनाशक और सब अतिसार व ग्रहणीरोग को ठीक करती है।

2. द्वितीय योग—घटक-खोवा-बनाने हेतु-शुष्ठीचूर्ण 2 पल, दुर्घ 2 प्रस्थ, भर्जन-गोदूध 8 पल, चासनी, शर्करा डेढ़ प्रस्थ, जल-थोड़ा सा। प्रक्षेप—त्रिकटु, त्रिफला, सफेदजीरा, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपत्र, नामकेशर, मोथा, जाविकी, जायफल, धनिया, लौंग, सौंफ, नलिका, मैनफल, अजमोद, अजबायन, धाय के फूल, जनावरी, तालमूली, लोध, गजपीपल, चिरौंजी, बीज, गिलोय, कपूर, रक्त-श्वेत चन्दन। प्रत्येक तालमूली, लोध, गजपीपल, चिरौंजी, बीज, गिलोय, कपूर, रक्त-श्वेत चन्दन। प्रत्येक 1-1 कर्ष। नि. वि.-प्रथमयोगोक्त विधि से बनाकर गुड़िका बनावें। मात्रा-आधा से 2 कर्ष, प्रातः वकरी के दूध से लेवें। उपयोग-आमवात, कास, श्वास, पीनस, ग्रहणी, अम्लपित्त, रक्तपित्त, क्षतक्षय, बीस प्रकार के स्त्रीरोग तत्काल नष्ट करता है। स्त्रियों के स्तन दूँ करता है, तथा सौभाग्यवर्धक, पुष्टिकर, धातुवर्धक है।

### **3. तृतीय योग-(सौभाग्यशुण्ठी वृहती)**

घटक-खोवा हेतु शुष्ठीचूर्ण 16 पल, गोदूध 160 पल। भर्जनहेतु-गोदूध 1 प्रस्थ। चासनी हेतु-मिश्री 43 पल, जल-यथावश्यक। प्रक्षेपद्रव्य शतावरी, विदारीकन्द, मूसली, गोखरू, बलामूल, गिलोयसत्त्व, सौंफ, श्वेतजीरा, सौंठ, मिर्च, पीपल,

चित्रक, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, अजवायन, तालीसपत्र, अजमोदा, सोयाबीन, रासना, पोखरमूल, वंशलोचन, देवदारु, सौफ, कपूर, जटामांसी, मेथी, मुलेठी, इवेतचंदन, लालचंदन, विडंग, नेत्रबाला, अडूसा, धनिया, वायफल, भोथा, वचा, मोचरस, दालचीनी, नागकेशर, जीवन्ती (कुल 43 द्रष्ट्य) प्रत्येक 2-2 कर्ष ।

नि. वि.-मृदु पाक से पकावें। मोदकादि का खरपाक निषिद्ध है। विधि-उपयुक्त प्रकार से है। मात्रा— $1/2$  कर्ष 2 कर्ष। प्रातःकाल शहद के साथ सेवन करें।

**उपयोग**—वर्ण, वल्य, आयुष्य, वलीपलितकाशन, वयःस्थापन, अग्निदीप्तिकर, अतिवृष्टि रसायन, विशेष रूप से स्त्रीरोग नाशक, प्रसूताओं के लिये अमृत के समान है। यह बीस प्रकार के योनिरोग, पंचविध प्रदर, योनिदोष, पाप-संसर्गज दोष, आमवात, शिरःशूल, सर्वशूल-विशेष रूप से कटिशूल, मूतिकारोग, वातपित्तकफज द्वन्द्वज-सन्निपातज सर्वरोगनाशक है। पुरुषों में वीर्य-वृद्धि करने वाला तथा स्त्रियों को सौभाग्य देने वाला है।

14. सुपारीपाक (आ.प्र.) अधिकार—इवेतप्रदर ।

**घटक**—सुपारी 40 कर्ष, घृत 40 कर्ष, मिश्री या चीनी 4 प्रस्थ, दूध 8 प्रस्थ, आंवला, शतावर 40-40 कर्ष, नागबे शर, नागरमोथा, सफेद चंदन, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, आंवला, चिराँजी, कुटजछाल, लजजालु, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायची, सफेद जीरा, स्थाह जीरा, सिधाड़ा, वंशलोंचन, जाविनी, जायफल, लौंग, धनिया, बड़ी इलायची के दाने। प्रत्येक सूधम चूर्ण सवा-सवा कर्ष लेवें। **निर्माणविधि**—सुपारी को बारीक कपड़ा छान चूर्ण करके या दूध में पीसकर बाद में दूध में डालकर पकावें। जब खोया के समान गाढ़ा हो जाय तब घी में भून लें। फिर अन्य द्रव्यों का चूर्ण मिला लें। चीनी की चाशनी बनाकर उसमें उपयुक्त द्रव्य मिलाकर पाक बना लें। **मात्रा**—2 से 4 कर्ष। **अनुपान**—जल या दूध। **उपयोग**—स्त्रियों के प्रमेह, जीर्णज्वर, अम्लपित, रक्तस्राव, मंदाग्नि, प्रदररोग में लाभ करता है। श्वेतप्रदर की उत्तम औषधि है। इससे अग्नि, बल और कांति बढ़ती है और अच्छा पुष्टिकारक है। गमनद है।

( 4 ) तेल

( १ ) आखुमांसतेल ( च.द. ) ।

## अधिकार—योनिकंद ।

**धटक व निवि**—चूहे को मारकर मांस के तत्काल छोटे-छोटे टुकड़े बनाकर तेल के साथ पकावें। **प्र.वि.**—तेलाक्त वस्त्र को योनि में धारणा करें। **उपयोग**—योनिकंद।

(2) उदुम्बरादितेल (प्रथम) (च. चि. 30) ।

घटक-स्नेह-तिलतैल । प्रस्थ । द्रव—गूलर के कच्चे फल, पंचवत्कल (वट, पीपल, पात्र, गूलर, पारसपीपल) की छाल, कुलक (परोरा) की पत्ती, चमेली की पत्ती, नीम की पत्ती—इन सब द्रव्यों को सम-प्रमाण में मिलावें । इनका मिलित एक द्रोण

प्रमाण में लेकर एक द्रोण जल में डालकर रातभर पड़ा रहते हैं। प्रातःकाल हाथ से मसलकर जल को छान लें। कल्कार्थद्रव्य-लाख, धव के फूल पलाश का गोंद, सेमर की छाल। प्रत्येक ।-। कर्ष लेकर कल्क बनावें। नि. वि.—स्तेह, द्रव व कल्क तीनों को मिलाकर यथाविधि तैल पाक करें। प्र.वि.—योनि में पिचु का घारण। पश्चात् शर्करा मिश्रित कषाय द्रव्यों के शीतलक्वाथ से सेवन करें। उपयोग=पिच्छलायोनि, विवृतायोनि, कालदुष्टायोनि और दारणायोनि सात दिन में शुद्ध होती है।

(3) उदुम्बरादि तैल (द्वितीय) (च. च. 30)

**निमस्त्रिविधि-** गूलर के दूध से तिलों को छः बार भावित कर उनसे तेल निकालें। फिर उस तेल को गूलर के क्वाथ से यथाविधि मिछ करें। प्र. वि.—योनि में पिचुधारणा।

( 4 ) गर्भविलासतंल ( भै.र.) । अधिकार—गर्भिणी चिकित्सा

घटक—स्नेह-तिलतंल । प्रस्थ । द्रव-(जल 4 प्रस्थ)

**कर्त्तव्य—** विकारीकंद, दाढ़िम, तेजपात, हल्दी, त्रिकुला, सिंचडे के पत्ते, चमेली के फूल, शतावरी, नीलोफर, लालकमल। समझाग मिलित  $1/4$  प्रस्थ। नि.वि. विधिवत् पाक करें। प्र.वि.—पान, अम्बिंग। उपयोग—गर्भस्थापक है, गर्भजूल-रक्त-स्राव नाशक। वृष्यतर। **विशेष—** काशीराज ने बनाया है।

( 5 ) धातव्यादितैल ( भै.र.) । सूतिकारोगप्रकरण

घटक—स्नेह-तिलतैल 1 भाग

**द्रव**—आंवले का स्वरस 4 भाग, बकरी का दूध 4 भाग। कन्कार्थ-घाय के फूल धव की छाल, धनिया, आवला, धतूरे के पत्ते या मूला, राल, नीलीमूल, कदम्ब की छाल, तगर, नीम की अन्तरछाल, निम्बू की जड़, मोथा, मोंठ, हरड़, कमल, श्रुति की छाल, तेजपात, अरलू की छाल, करंजबीज, तुलासी, जामुन की छाल, भारंगी, समुद्रफेन रीठा, बैर, कैथ, पिप्पली, घृतकुमारी, कसेरू। सब समभाग। मिलित मात्रा 1/4 भाग।  
**नि.वि.**—यथाविधि मिलाकर पाक करें। **प्रवि.**—अभ्यंग, पान। **उपयोग**—प्रसूता के सब रोग। **विशेष**—यह 'सुरसूनु' द्वारा उपविष्ट है।

(6) धातव्यादितैल (च.चि. 30 योनिप्रकरण, अ ह.उ. 34) ।

(०) वातपदादत्ता । घटक-स्नेह-तिलातैल 1 प्रस्थ । द्रव-बकरी का मूत्र 2 प्रस्थ । गोदुग्ध 2 प्रस्थ । कल्कार्थ द्रव्य—धाय के फूल, आंवला, काला मूरमा, मुनेठी कल्पकमल, जामुन की गुठली, आम की गुटली, कासीस, लोध, काया, तेंदू की छाल, फिटकरी, अनार की छाल, कच्चे गूलार के फल, प्रत्येक 1-1 का, नि. वि.—स्नेह, द्रव व कल्क को मिलाकर यथाविधि पीसकर कल्क करें । प्र.वि.—योनि में पिचुधारणा । कटि, पृष्ठ व त्रिक्षेत्र पर अभ्यंग हपाक करें । मात्रा—आवश्यकतानुसार । उपयोग—पिच्छिला, साविणी वासनबस्ति ।

उपलुत्ता, विलुत्ता, उत्ताना, उन्नता (अन्तमुखी), शोथयुक्ता, स्फोट व शूलयुक्ता योनि में लाभकर है।

### (7) नतादितैल (च.द.) अधिकार—योनिव्यापत् ।

घटक—स्नेह=तैल 1 भाग, द्रव=जल 4 भाग। कल्क=तगर, बड़ी कटेरी, कूठ, संधव, देवदारु। समभाग। मिलित 1/4 भाग। नि. वि.—यथाविधि तैल सिद्ध करें। प्र. वि. योनि में पिचुधारण। उपयोग—योनि की पीड़ा शांत होती है।

### (8) प्रियंगवादि तैल (भै.र.) । अधिकार—प्रदर।

घटक—स्नेह-तिलतैल 1 प्रस्थ। द्रव—अजादुग्ध 1 प्रस्थ, दधिमस्तु 2 प्रस्थ दारुहल्दीकवाथ 1 प्रस्थ।

कल्कार्थ द्रव्य प्रियंगु, नीलकमल, मुलेठी, हरड़, बहेड़ा, आंवला, रसाँत, लालचंदन, इवेतचन्दन, मंजीठ, सौफ़, राल, संधव, मोथा, मोचरस, अनन्तमूल, मकोय, वेलगिरी, सुगंधबाला, गजपीपल, पिप्पली, काकोली, क्षीरकाकोली, सुगंध-द्रव्य। प्रत्येक 2-2 कर्ष। नि. वि.—यथाविधि पाक करें। प्र. वि.—पान। मात्रा—1/2-2 कर्ष। उपयोग—प्रदर योनिरोग, ग्रहणी, अतिसार नाशक। गर्भरक्षक।

### 9. बलातैल (प्रथम) [सु. चि. 15, शा.सं.] ।

घटक—स्नेह-तिलतैल-1 भाग। द्रव-बलामूलकवाथ 8 भाग, दण्डमूलकवाथ 8 भाग, जौ-बैर, कुलथी का कवाथ 8 भाग, गोदुग्ध 8 भाग। कल्कार्थ द्रव्य मधुरगण (काकोल्यादिगण) के द्रव्य, सेंधानमक, अगर, सर्जरस (राल), सरलकाष्ठ, देवदारु, मंजीठ, चंदन, कूठ, इलायची, कृष्णसारिवा, जटामांसी, छारछरीला, तेजपात, सारिवा (अनन्तमूल), वच, शतावरी, असगंध, सौफ़, पुनर्नवा। समभाग। मिलित कल्क—चतुर्थांश भाग। शाङ्खधर ने सर्जरस और सरलकाष्ठ को नहीं पढ़ा है, तगर अधिक बताया है, तथा मधुरगण के स्थान पर जीवनीयगण कहा है। (जीवनीयगण-10—जीवन्ती, मुदगपर्णी, मापपर्णी, काकोली, क्षीरकाकोली, मेदा, महामेदा, जीवक, कृष्णभक, मुलेठी) नि. वि.—स्नेह 1 भाग, द्रव-32 भाग व कल्क स्नेह से चतुर्थांश भाग।

प्र. वि.—योनिसंतर्पण (पिचुधारण), अभ्यंग, पान, बस्ति, भोजन में प्रयोग करें। उपयोग 'बलातैलमिदं रुयातं सर्ववातविकरनुत्।' प्रसूतिका को उसकी शक्ति के अनुमार इसका सेवन कराना चाहिये। गर्भारण की इच्छा वाली स्त्री, नष्टशुक्रवाले पुरुष, वायु से क्षीरण, मर्मस्थान में चोट लगे हुए, कुचले हुए, हड्डी दूटे हुए और थकान से पीड़ित व्यक्तियों के लिये उपयुक्त सर्वविधियों से बरतें। यह आक्षेपक आदि वातरोगों को दूर करता है। यह हिक्का, भयंकर श्वास, कास, अधिमंथ, गुल्म व अन्तवृद्धि को छः मास के प्रयोग से ठीक करता है। इसके सेवन से धातुओं की वृद्धि होकर व्यक्ति का योवन स्थिर हो जाता है। राजाओं, राजाओं के समान सुखी, सुकुमार और धनी लोगों के लिये इस तैल का निर्माण करना चाहिये।

### 10. बलातैल द्वितीय अर्थात् शतपाकीबलातैल (सु. चि. 15)

नि. वि.—तिलों को बलाकवाथ की सात भावना देकर उन तिलों से तैल निकालें। फिर इसे बलाकवाथ के साथ सौ बार पकावें। प्र. वि.—वायुरहित एकांत घर में शवत्य-नुसार इसका सेवन करें। प्रतिदिन स्नेहपाचन के बाद दूध के साथ घृतयुक्त साठी चावल का भात भोजन में लें। बलातैल एक द्रोण मात्रा में सेवन करें। इससे वह दुगुना भोजन करने वाला, बल व वर्ण से सम्पन्न बनता है व सब पापों से मुक्त होकर 100 वर्ष जीता है। विशेष-1. भावनार्थ बलामूल तिल के समान प्रमाण में लें। फिर आठ गुने जल में पकाकर अष्टामांश रहने पर छान कर भावना दें। तैलपाक के समय स्नेह में केवल चतुर्गुण बलाकवाथ अथवा चतुर्गुण बलकवाथ व चतुर्थांश बलामूलाकल्क अथवा चतुर्गुण बलाकवाथ चतुर्थांश पूर्वोक्त मधुरादि द्रव्यों का कल्क लिलावें।

2. बलातैल के शतपाक बाद भी सहस्रपाक करने का विधान दक्षिण के केरल प्रान्तीय वैद्य-परम्परा में ग्रद्यावधि प्रचलित है।

### 11. बलातैल अथवा बलाधृत (च. चि. 30, ग्र. हृ. उ. 34)

अधिकार—वातजययोनिरोग। घटक—स्नेह-घृत या तैल। आढ़क। द्रव-बलाकवाथ 2 द्रोण, दुग्ध 4 आढ़क। कल्कार्थ द्रव्य-1 सरिवन (शालपर्णी) 2-क्षीरविदारी 3-जीवन्ती, 4-वीरा (पुणिपर्णी या शतावरी) 5-कृष्णभक (वा कृद्धि) 6-जीवक, 7-मुण्डी (श्रावणी) 8-पीपल, 9-मृदगपर्णी, 10-पीलू (पीलूपर्णी) 11-माषणपर्णी 12-क्षीरकाकोली, 13-काकनासा। (वाग्भट ने शर्करा अधिक नाना है।) समभाग मिलित कल्क स्नेह से चतुर्थांश लेवें। नि. वि.—स्नेहपाकविधि से पाक कर उतारकर छान लें। मात्रा—बलामूल (1 से 2 तोला)। प्रयोगविधि—पान। उपयोग—वातपित्तजन्य योनिरोगों को दूरकर गर्भ का धारण कराता है। (वातपित्तकृतान् हत्वा गर्भ दधाति तत्) विशेष—यह उत्तम वातनाशक है।

### 12. मूषिकतैल या योन्यशोहरतैल।

अधिकार—योन्यश (योनिव्यापत्)। घटक—व नि. वि.—मूषिका का भास 1 भाग, तिलतैल 4 भाग, जल 6 भाग पकावें। प्र. वि.—योनि का अभ्यंग। उपयोग—योन्यश।

### 13. हयमारादितैल (भै.र.) अधिकार—योनिव्यापत्।

स्नेह—सरसों का तैल 1 प्रस्थ। कल्कार्थ—कनेर की जड़, गिलोय, सौंठ, मरिच, पीपल, संधव, रसाँत, निशेथ, दत्तीमूल, हरिद्रा, हरड़, कायफल, मोथा, इन्द्रायणमूल, पाठा, नागकेशर, चित्रकछाल समभाग। मिलित 10 पल। द्रव—जल 4 प्रस्थ। नि. वि.—विधिवत् तैल सिद्ध करें। प्रयोग—अभ्यंग। योनि-पिचुधारण। उपयोग—दारण योनिकण्डू, भगांकुर-वृद्धि, कामोन्माद, योनिव्रण, योनिक्लेद, योन्यश।

### 14. हिंगवादि तैल (भै.र.)।

अधिकार—योनिव्यापत्। घटक—कल्कार्थ—हींग, कासीस, संधव, सौंठ, तेजपत्र, चित्रकछाल, एलुआ,

ममुद्रफेन, कपूर, यवक्षार, स्वजिक्षार, सुहागा, हरिद्रा। समभाग। मिलित। पल।

स्नेह—कटुतैल 1 प्रस्थ। द्रव-जल 4 प्रस्थ। विधिवत् पाक करें। प्रयोग—अभ्यंग पिचुधारण (योनि में)। उपयोग—रजौरोध, रजःकृच्छ्रता, योनिशूल।

### 15. सुधारकतैल (भै.र.) अधिकार—योनिव्याप्ति।

कल्क—आंवला, धनिया, मोथा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, क्रृषभक, नीलकमल, असगंध, वंशलोचन, शिलाजीत, रसोंत, मंजीठ, मुरामांसी और जवासा। समभाग मिलित 10 पल। स्नेह—तिलतैल 1 प्रस्थ। द्रव-बला, भूंगराज, दूर्वा, बव, पारिभद्र का स्वरस या बवाथ, दही का पानी तण्डुलोदक, लाक्षा का स्वरस या बवाथ। प्रत्येक (8 द्रव्यों का) 1-1 प्रस्थ। विधिवत् पाक करें। प्रयोग—अभ्यंग, पिचुधारण। उपयोग—योनिरोगनाशक। बल्य, रमायन, वृद्ध, आयुष्य, कामोदीपक।

### 16. सूतिकादशभूलतैल (भै.र.)। घटक—स्नेह-कटुतैल। प्रस्थ।

द्रव—दुग्ध 4 प्रस्थ। कल्कार्थ द्रव्य—शालिपर्णी, पृश्निपर्णी, छोटी बटेरी, बड़ी कटेरी, गोखरू, पियावासा, गधप्रसारणी, सोंठ, गुडूची, मोथा। सब समभाग। मिलित प्रमाण स्नेहचतुर्थीश। नि.वि.—सबको मिलाकर यथाविधि मृदु अग्नि से पाक करें। प्र.वि.—अभ्यंग, पान। मात्रा—1/2 से 1 तोला। उपयोग—ज्वर व दाह से युक्त सूतिकारोग नष्ट होता है।

### 17. शतावरीतैल (शा.सं.)

घटक—बवाथार्थ-शतावरी, बरियारे की जड़, गंगेरन की जड़, शालिपर्णी, पृश्निपर्णी एरण्डमूल-छाल, असगंध, गोखरू, बेल की छाल, काश की जड़, पियावांसा। प्रत्येक  $1\frac{1}{2}$  पल (6 कर्ष)। जल 4 प्रस्थ (चोगुना) शेष बवाथ 1 प्रस्थ। स्नेह—तिलतैल 1 प्रस्थ द्रव-दुग्ध, शतावरीरस, जल और उपयुक्त बवाथ प्रत्येक 1-1 प्रस्थ। कल्कार्थ—शतावरी, देवदार, जटामांसी, तगर, श्वेतचंदन, सौंफ, बग्नियारे की जड़, कूठ, इलायची, छारछरीला, नीलाफर, क्रृद्धि, मेदा, मुलेठी, काकोली, जीवक। प्रत्येक 1-1 कर्ष। नि.वि.—विधिवत् गोमयाग्नि से पाक करें। प्रयोग—पान। अभ्यंग, पिचुधारण। मात्रा—उपयोग पुत्रों में वृद्धि। स्त्रियों में वन्ध्यात्व, योनिशूल, असृदर नाशक। साथ ही अंगशूल, शिरशूल, कामला, पाण्डु, गरविष, गृध्रसी, लीहावृद्धि, शोष, प्रमेह, दण्डापतानक, दाहयुक्त वातरक्त वात-पित्तज रोग, आध्मान, रक्तपित्त नाशक है।

विशेष—“शतावरीतैलमिदं कृष्णात्रेयेण माषितम्।”

### 18. शल्लक्षयादितैल (च.द.)। अधिकार—योनिव्याप्ति।

घटक—स्नेह तैल 4 प्रस्थ। द्रव—शल्लकी (सलाई) जिंगिनी, जामुन की छाल, धाय की छाल, पंचवल्कल (कुल मात्रा 4 प्रस्थ, जल 32 प्रस्थ में पकाकर चतुर्थीश शेष रखें 8 प्रस्थ।) नि.वि.—बवाथ से विधिवत् तैल पाक करें। प्र.वि.—पिचुधारण। मात्रा—प्रावश्यकतानुसार। उपयोग—विष्वलुता योनिव्याप्ति।

### (5) घृत

#### 1. अशोकघृत (भै.र.)। अधिकार—प्रदर।

घटक—स्नेह—घृत 1 प्रस्थ। द्रव—अशोकत्वक् बवाथ 1 प्रस्थ। (अशोक छाल 1 प्रस्थ, 1 आढक जल शेष 1 प्रस्थ)। 2-जीरक बवाथ 1 प्रस्थ। 3-तण्डुलाम्बु 1 प्रस्थ। 4-अजादूग्ध 1 प्रस्थ। कल्कार्थ—जीवनीय द्रव्य, चिराँजी, फालसा, रसोंत, मुलेठी, अशोकमूल, प्रत्येक 1/2-1 पल। प्रक्षेप—शर्करा 8 पल। नि.वि.—यथाविधि पकाकर प्रक्षेप ढालकर रख लें। मात्रा—2 कर्ष। अनुपान—मंदोदण दुध। उपयोग—सब प्रकार के प्रदर, कुक्षिशूल, योनिशूल, मंदाग्नि, अरुचि, पाण्डु, कृशता, श्वास, कास नाशक, आयुष्कर, पुष्टिकर, बलवर्ण-प्रसादनी। विशेष—यह विष्णु ने कहा है।

#### 2. कदलीघृत (यो.र.)। अधिकार—सोमरोग।

घटक—स्नेह—घृत 1 प्रस्थ। द्रव—बवाथ 1 प्रस्थ। आढक (कदलीकन्द-स्वरस 1 द्रोण में कदलीपुष्प 100 पल ढालकर पकावें, शेष चतुर्थीश=1 आढक=4 प्रस्थ)। (2) गोदुग्ध 1 प्रस्थ। कल्कार्थ द्रव्य—पिष्ठली, इलायची, लौंग, कैथ के फत, जटामांसी, केले के कद, लालचंदन, न्यग्रोधादिगण की औषधियां सभी प्रकार के कमल। प्रत्येक 1-1 कर्ष। नि.वि. विधि विधिवत् घृतपाक करें। मात्रा—1 कर्ष। उपयोग—सोमरोग, प्रदर, मूत्रकृच्छ्र, अश्वरी, बीस प्रकार के प्रमेह, मूत्रातिसार। यह उत्तम मेह-नाशक योग है।

#### 3. काशमर्यादिघृत (च.चि. 30, ग्र.ह.उ. 34)।

अधिकार—वातजयोनिरोग। घटक—स्नेह—घृत 1 प्रस्थ। द्रव—गोदुग्ध 4 प्रस्थ। कल्कार्थ द्रव्य—गंभारी, विफला, मुनक्का, कासमर्द, फालसा, पुनर्नवा, हल्दी, दारुहल्दी, काकनासा, पियावासा, शतावरी, गुडूची, (12 द्रव्य) प्रत्येक 1-1 कर्ष, मिलित कल्क स्नेह से चतुर्थीश। नि.वि.—पाठ में द्रव का निर्देश न होने से अधिकार को देखते हुए चतुर्गुण गोदुग्ध मिलाकर पाक करें। प्र.वि.—पान। मात्रा—1 से 2 कर्ष। उपयोग वातजयोनिरोगनाशक व उत्तम गर्भप्रद है।

#### 4. कुमारकल्याणघृत (भै.र.)

घटक—स्नेह—गोधृत 2 प्रस्थ। द्रव—(1) बवाथ-बकरी का मां व दशमूल मिलित 50-50 पल, जल अष्टगुण 800 पल, अवशिष्ट 200 पल=2 प्रस्थ। (2) गोदुग्ध 2 प्रस्थ। (2) शतावरीस्वरस 2 प्रस्थ। कल्कार्थ द्रव्य—कूठ, कन्तुर, मेदा, महामेदा, जीवक, क्रृषभक, प्रियंगु, हरड़, बहेड़ा, आंवला, दारुहल्दी, तेजपत्र, इलायची, शतावरी, काश्मरी, मुलेठी, क्षीरकाकोली, मोथा, नीलकमल, जीवन्ती, रक्तचन्दन, काकोली, कृष्णसारिवा श्वेतसारिवा, विदारी, क्षीरविदारी, मंजीठ, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, नागकेशर, दारुहल्दी, हरेणुका (संभालू के बीज), मालकांगनी की जड़, शंखपुष्पी, नलिनी वन्या, अगर, दालचीनी, लौंग, केशर, शरपुंखा का मूल, श्वेतवटी का मूल। प्रत्येक 1-1 वन्या, अगर, दालचीनी, लौंग, केशर, शरपुंखा का मूल, श्वेतवटी का मूल। प्रत्येक 1-1

कर्ष । नि.वि.—विधिवत् ताम्र या मृत्तिका पात्र में पाक करें । शीतल होने पर प्रक्षेप डालें । प्रक्षेप—कज्जली 2 कर्ष (शु. पारद, शु. गंधक 1-1 कर्ष) अभ्रकमस्म 1 कर्ष, गहद अर्धप्रस्थ । फिर कांचपात्र में रख देवें ।

5. **कुमारकल्पद्रूमघृत** (मै.र.) । मै.र. के लेखक ने 'कुमारकल्याणघृत' और 'कुमारकल्पद्रूमघृत' के नाम से दो योग दिये हैं, परन्तु दोनों के पाठ समान हैं।

6. **जीवनीय घृत** (च. नि. 30) ।

बृ. शतावरी घृत की विधि से जीवनीयवर्ग की ओषधियों के क्वाथ व कल्क और दूध से घृत का पाक करें । यह गर्भदायक व पित्तजयोनिरोगनाशक है ।

7. **नीलोत्पलादिघृत** (च.द.) । अधिकार-योनिव्याप्त ।

घटक-स्नेह—गोघृत । भाग । द्रव—शतावरीस्वरम 4 भाग । कल्कार्थ द्रव्य—नीलोफर, खस, मुलेठी, मुनक्का, विदारीकंद, तृणपंचमूल (कुण, कास, शर, दम, इधु इतके मूल), जीवनीय गण की ओषधियाँ । समभाग । मिलित 1/4 भाग । नि. वि.—विधिवत् पाक करें । मात्रा—1-2 तोला । प्र. वि.—चौथाई शक्कर मिलाकर चटावें । उपयोग—रक्तप्रदर, वातजप्रदर, रक्तपित्त, मूत्रकुच्छ, पित्तजगुल्म, बलक्षीणता, शुक्रक्षीणता ।

8. **न्यग्रोधाद्यघृत** (मै.र.) । अधिकार-प्रदर ।

घटक-स्नेह-गोघृत 1 प्रस्थ । द्रव—(1) तण्डुलोदक 1 प्रस्थ । (2) आंवले का रस 1 प्रस्थ । (3) क्वाथ का द्रव 1 प्रस्थ । बड़, पीपल, अर्जुन, गिलोय, अडूसा, कुटकी, पोखर, जामुन, चिरींजी, श्योनाक, गूलर, महुआ, खरैटी, वेतस, तेंदु, कदम्ब, रोहितक, पीतसार इन सबकी छाल प्रत्येक 2-2 पल लेकर । यवकूटकर, 1 द्रोण में पकावें शेष 1 प्रस्थ रखें । कल्कार्थ द्रव्य—मुलेठी, महुआ, पिण्डखजूर, दारुहल्दी, जीवन्ती, गंभारीफल, काकोली, क्षीरकाकोली, लालचंदन, श्वेतचंदन, नागकेशर, प्रत्यन्तमूल । प्रत्येक 3-3 कर्ष । नि.वि.—विधिवत् पाक करें । मात्रा—1/2 से 1 तोला । प्रनुपान—मन्दोषण दुग्ध या शीतल जल । उपयोग—सर्व प्रकार के प्रदर, योनिशूल, नेत्रदाह, कुक्षिदाह, मंददृष्टि, तिमिर, आधमान, आनाह, शूल व वात-पित के रोग, अम्लपित्त, योनिरोग ।

9. **फलघृत** (प्र.) अ.हृ.उ. 34 ।

अधिकार-योनिव्याप्त ।

घटक-स्नेह—घृत-1 प्रस्थ । द्रव—दूध 4 प्रस्थ । कल्क—मंजीठ, कूठ, तगर, त्रिफला, शंकरा, वच, हल्दी, दारुहल्दी, मुलेठी, मेदा, अजवायन, कुटकी, क्षीरविदारी, हींग, काकोली, असगंध, शतावरी । प्रत्येक 1-1 कर्ष मिलित स्नेह से चतुर्थांश ।

नि.वि.—यथाविधि स्नेह पाक करें । प्र.वि.—पान । मात्रा—1 से 2 कर्ष ।

'योनिशुक्रप्रदोषेषु तत्सर्वेषु प्रशस्यते ।'

उपयोग—यह सब योनिदोषों व शुक्रदोषों में प्रशस्त है । आयुवर्धक, पोषिक, मेध्य, धन्व, उत्तम पुंसवन है । इसका नाम 'फलघृत' है, पुष्प (आर्तव काल) में पीने

से फल (गर्भधारणा) कराता है । 'फल सपिरिपि ख्यातं पुष्पे पीतं फलाय तत् ।' जिनके बच्चे मर जाते हैं उनके लिये व जो गर्भिणी है, उनके लिए हितकर है । यह वालकों का ग्रहनाशक व शरीरवर्धक है ।

10. **फलघृत** (द्वि.) (च. द.) **फलकल्याणघृत** (मै.र.)

अधिकार-योनिव्याप्त । घटक-स्नेह-घृत । प्रस्थ । द्रव—शतावरीस्वरस 4 प्रस्थ, गोदुग्ध 4 प्रस्थ । कल्कार्थ द्रव्य-मंजीठ, मुलेठी, हरड़, बहेड़ा, आंवला, खांड, खरेटी, मेदा, क्षीरकाकोली, काकोली, असगंध, अजमोद, हल्दी, दारुहल्दी, हींग, कुटकी, नीलोफर, कुमुदनी, मुनक्का, दोनों काकोली, श्वेतचंदन, रक्तचंदन, प्रत्येक 1-1 कर्ष । नि. वि.—विधिवत् घृतपाक करें । मात्रा—1 कर्ष । प्र.वि.—पान । उपयोग—इस घृत के पीने से पुरुष स्त्रीमैथुन में वृषभ की तरह शक्ति प्राप्त करता है । नारी इसके पीने से सुन्दर और बुद्धिमान पुत्रों को उत्पन्न करती है । जिस स्त्री को गर्भधारणा न होती हो या गर्भ में बच्चे मर जाते हों या बच्चे अल्प आयु में मर जाते हों या केवल कन्या होती हो, उसे इसके सेवन से सुन्दर पुत्र उत्पन्न होता है । यह योनिदोष, रजोदोष, परिस्त्राव को नष्ट करता है । मंतान व आयु की बढ़िया करता है ग्रहदोष को दूर करता है ।

विशेष—(1) यह 'फलघृत' अश्विनीकुमारों ने बताया है । (2) इसमें लक्ष्मणा मूल को कुछ वैद्य ढालते हैं । (3) जीवित बछड़े वाली और एक वर्णवाली गाय के दूध का घृत लेवें ।

11. **फलघृत** (त्र.) (शा.सं.)

घटक—(अ) कल्कार्थ—हरड़, बहेड़ा, आंवला, मुलेठी, कूठ, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, कुटकी, वायविडंग, पीपर, नागरमोथा, इन्द्रायण की जड़, कायफल, वच, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, सारिवा (अनन्तमूल), कृष्णसारिवा (श्यामा), प्रियगु, सौफ, हींग, रास्ता, श्वेतचंदन, रक्तचंदन, चमेली के फूल, वंशलोचन, कमल, शक्कर, अजमोद और दन्ती की जड़ । प्रत्येक 1-1 कर्ष । (आ) स्नेह—जीवद्वत्सैकवणी गौ का घृत—1 प्रस्थ । (इ) द्रव—गोदुग्ध 4 प्रस्थ । नि. वि.—विधिवत् पाक करें । (दो पाक करने चाहिये, प्रथम चौगुने दूध से, फिर चौगुने जल से । चकदत्त में चौगुने शतावरीस्वरस से भी पाक करना लिखा है) प्रयोग—पान । शुभ तिथि, दिन और पुष्यनक्षत्र में स्त्री और पुरुष पान प्रारम्भ करें । मात्रा—1 से 2 कर्ष । उपयोग—पुरुषों में वृष्य । मृत्रियों में वंध्यत्वहर । यह आदिवंध्या, काकवंध्या और मृतवत्सा में लाभप्रद है । पुत्र बुद्धिमान और शतायु होते हैं । विशेष—1. एतत्फलघृतः नाम भरदाजेन भाषितम् ।

2. अनुकृत लक्ष्मणामूल क्षिपेत्तत्र चिकित्सक ।

12. **लघुफलघृत** (च.द., शा.सं., मै.र.)

घटक—कल्कार्थ—हरड़, बहेड़ा, आंवला, पियावांसा, सफेद फूलबाली कटसरैया, गिलोय, पुनर्नवा, श्योनाक की छाल, हल्दी, दारुहल्दी, रास्ता, मेदा, शतावरी । सब

समभाग। कुल 4 पल। स्नेह-घृत 1 प्रस्थ। द्रव-दुर्घ 4 प्रस्थ। (तथा जल 4 प्रस्थ)। नि.वि.—विधिवत् पाक करें। प्रयोग—पान। मात्रा—1-4 कर्ष। उपयोग—यह योनि-रोगों (गभीशयरोगों) की उत्तम औषधि है। (एतत्फलघृतं नाम योनिदोषहरं परम्।) योनिशूल, पीड़िता-चलिता-नि.सृता-विवृता-पित्तयोनि व पष्ठयोनि। योनिरोग नष्ट होकर वह प्रकृतिस्थ हो जाती है और बार-बार गर्भधारणा होता है।

### 13. मुद्गाद्यघृत (च. द.)। अधिकार—असृग्दर।

घटक—स्नेह-घृत 2 सेर। द्रव—मूँग व उड़द का कवाथ 8 सेर। कल्क—चि. क. रासना, सोंठ, पिप्पली, वेलगिरी। समभाग मिलित 1/2 सेर। नि. वि—यथाविधि पाक करें। प्र. वि.—पान। 1 से 2 कर्ष। उपयोग—रक्तप्रदर शांत होता है।

14. भद्रोत्कटाद्यघृत (भ. र.) अधिकार—सूतिकारोग। घटक—स्नेह गोघृत 1 प्रस्थ। द्रव—कवाथ 4 प्रस्थ। (मूल-पत्र-शाखायुक्त भद्रोत्कट 100 पल, जल, 2 द्रोण, शेष 4 प्रस्थ। कल्क द्रव्य-त्रिकटु, पीपरामूल, चित्रक, श्वेतजीरा, लघु पंचमूल, रासना, हरंडमूल, बलामूल, सैधवलवण, यवक्षार, सजिक्षार, कालाजीरा। प्रत्येक 1-1 कर्ष। नि.वि.—यथाविधि पाक करें। उपयोग—सूतिकारोग, सग्रहणी, पाण्डु, अर्णनाशक है। अग्निदोषक, स्तन्यविशोधक है।

### 15. विश्ववल्लभघृत (भ. र.) अधिकार—प्रदर।

घटक—स्नेह-घृत	1 प्रस्थ
द्रव्य—भृंगराजस्वरस	"
निगुण्डीस्वरस	"
शतावरीस्वरस	"
कुश का कवाथ	"
विदारीकंद का स्वरस	"
छागदुर्घ	"

कल्कार्थ—दाढ़िम, वेलगिरी, मोथा, लौंग, इलायची, हरड़, आंवला, वेलगिरी, श्योनाक, गंभारी, पाढ़ल, अगस्त, दाख, लालचन्दन, चंपा की छाल, हल्दी, दारूहल्दी, चित्रक, पंचलवण पृथक्-पृथक् समभाग। मिलित 4 प्रस्थ। नि.वि.—विधिवत् पाक करें। मात्रा—1 कर्ष। उपयोग—स्त्रीरोगनाशक।

### बृहत्शतावरीघृत या शतावर्यादिघृतलंह (च. चि. 30, अ. ह. उ. 24)

अधिकार—प्रदर या असृग्दर (पित्तज में)। घटक—स्नेह-घृत 1 आढ़क।

द्रव—शतावरीस्वरस—1 आढ़क

दुर्घ — 1 आढ़क

(‘शतावरीमूलाश्वतसः संप्रवीडयेत्। रसेन क्षीरतुल्येन पञ्चेतेन घृतादकम्।’)

“प्रादं शतावरीमूलपीडनेन यावद्रसो भवति तेन समं क्षीरघृतं वृद्ध्यमाणकल्कैः पाचनीयम्”

चक्षः)। कल्क द्रव्य—1-10 जीवनीय वर्ग की 10 औषधियां 1-1 मांग, 11 शतावरी 1 मांग, 12 मुनक्का-1 मांग, 13 फालसा-1 मांग, 14 चिरोंजी-1 मांग, 15 मुलेठी-2 मांग। (विशेष-वारभट ने मुलेठी 1 मांग, बला 1 मांग अतिवला 1 मांग लिखा है)। इनकी मिलित मात्रा स्नेह से चतुर्थश्श लेनी चाहिये। प्रक्षेप-घृत सिद्ध होने पर छान ले श्रीतल होने पर निम्न द्रव्य मिलवें मधु 8 पल, पीपल का चूर्ण 8 पल, मिथ्री 10 पल। मात्रा—1 कर्ष। प्र.वि.-पान (अवलेहन)। उपयोग—यह योनि, आर्तद व शुक्र के दोष नष्ट करता है, वृष्य और पुंसवन (पुत्रदायक) है। इससे उरक्षत, क्षय-रोग, रक्तपित्त, कास, श्वास, हलीमक, कामला, वातरक्त, विसर्प, हृदग्रह, शिरोग्रह, उन्माद, अपस्मार, अरति तथा वातपित्तजन्य रोगों का नाश होता है।

### 17. चक्रदत्तोक्त 'बृहच्छतावरीघृत' का पाठ। अधिकार—असृग्दर।

घटक—स्नेह-घृत 1 प्रस्थ। द्रव—शतावरीस्वरस 1 प्रस्थ, दुर्घ 2 प्रस्थ।

कल्क द्रव्य—जीवनीय आठ द्रव्य अष्टवर्ग (जीवक, कृषभक, काकोली, क्षीर-काकोली, मेदा, महामेदा, कृद्धि, वृद्धि, मुलेठी, चंदन, गोखरु, कौच के बीज, गंगेरन, शालिपर्णी, पृश्निपर्णी, विदारीकंद, अनन्तमूलश्वेत, अनन्तमूलकृष्ण, शर्करा गंभारी के फल-प्रत्येक 1-1 कर्ष। नि.वि.—यथाविधि पाक करें। प्र.वि—पान। मात्रा—1 से 2 कर्ष। उपयोग—रक्तज. पित्तज, वातज विकारों में, वातरक्त, क्षय, श्वास, हिक्का, भयंकर कास, अंगदाह, शिरोदाह (रक्तपित्तज), विदोपज, असृग्दर, दारुण, मूत्रकुक्ष्य, इन रोगों को नष्ट करता है, जैसे सूर्य अंधकार को नष्ट करता है।

(चरकोक्त 'बृहच्छतावरीघृत' को चक्रपाणि ने योनिव्याप्त प्रकरण में पढ़ा है)

### 18. सोवघृत (भ. र.)

कल्कार्थ—सफेद सरसों, वचा ब्राह्मी, शंखपुष्पी, पुनर्नवा, क्षीरकाकोली, कूठ, मुलेठी, कुटकी, मुनक्का, गंभारीफल, फालसे, श्वेतसारिवा, कृष्णसारिवा, हरिद्रा, पाठा, भांगरा, देवदारु, हुरहुर, मंजीठ, हरट, बहेडा, आंवला, प्रियंगु, अड़मे के फूल, गु. स्वरंगेरिक। समभाग। कुल 10 पल। स्नेह-गोघृत 1 प्रस्थ। द्रव—जल 4 प्रस्थ विधिवत् पाक करें। प्रयोग—पान। दो मास से 6 मास तक गर्भवती को वेवन कराये। उपयोग—बुद्धिमान, सर्वरोगरहित व स्पष्टवाणी उच्चारण करने वाला युवा उत्पन्न होता है। योनिदोष, रेतोदोष। वन्ध्या। यह योग स्वर और श्वरण शक्ति को उत्तम बनाता है। “जह गदगदमूकत्वं पानादेवापकर्षति।”

सप्तरात्रप्रयोगेण नरः शूतिधरो भवेत् ॥

विशेष—सोवघृत को अभिमत्रित कर सेवन करना चाहिये। गायती मन्त्र जपे।

यदाह सुश्रुतः—‘यथ नोदीरितं मत्रं योगेषु येषु साधने।

सर्वत्र गादिता तत्र गायत्री फलसिद्धिदा ॥

### 19. शालमलीघृत—(यो.र.)। अधिकार—प्रदर।

घटक-सेमल के फूलों का रस, पृश्नपर्णी, काष्मरी, चंदन के कल्क और ववाथ से घृतपाक करें। मात्रा-1 कर्ष। उपयोग—सर्वप्रदरताशक, बलवर्ण-अग्निवर्धक।

## 20. शीतकल्याणघृत (च.द., भै.र.)।

अधिकार-असुग्दर।

घटक-स्नेह-घृत 1 प्रस्थ। द्रव-गोदुग्ध 4 प्रस्थ। जल 2 प्रस्थ।

कल्क द्रव्य-कुमुद, पद्माख, खस, गेहूं, लाल शालिचावल, मुदगपर्णी, क्षीरकाकोली गंभारी, मुलेठी, बलामूल, अतिबला का मूल, नीलोफर, ताढ़ की जटा, विदारीकद, गतावरी (सौंफ-भै.र.), शालपर्णी, जीवक, (जीरा-भै.र.), त्रिपला, खीराककड़ी के बीज, कच्चा केला। प्रत्येक आधा-आधा पल। नि.वि.—सबको मिलाकर विधिवत् पाक करें। प्र.वि.-पान। मात्रा-1 तोला। उपयोग—प्रदर, रक्तपित्त, हलीमक, सब प्रकार के पित्तरोग, कामला, वातरक्त, अरोचक, जीर्णज्वर, पाण्डुरोग, मद, भ्रम रोग नष्ट होते हैं। जिस स्त्री को अल्प मासिकस्थाव होता हो और गर्भधारणा नहीं होता हो, उसे प्रतिदिन देने से स्त्री को प्रसन्नता देता है। यह उत्तम रसायन है।

विशेष-उत्तम पित्तनाशक योग है।

## (6) आसव-अरिष्ट

### 1. अशोकारिष्ट (भै.र.)। अधिकार-प्रदर।

घटक-क्वाथ—अशोक छाल, 1 तुला, जल 4 द्रोण। अवशेष 1/4 भाग।

प्रक्षेप—गुड़ 200 पल। धाय के फूल 16 पल। कालाजीरा, मोथा, सोंठ, दारु-हरिद्रा, नीलकमल, अडूसा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, आम की गुठली, सफेदजीरा, श्वेत-चन्दन। प्रत्येक 1-1 पल। विधिवत् मिलाकर संधान (1 मासतक) करें। प्रयोग-पान। मात्रा-2 तोला। उपयोग—रक्तप्रदर, ज्वर, रक्तपित्त, मंदाग्नि, अरोचक, प्रमेह, शोथ। विशेष-रक्तस्थावयुक्त स्थान पर फोया भिगोकर रखने से व योनि में पिचुधारण करने से रक्तरोध करता है।

### 2. जीरकाद्यरिष्ट (भै.र.)

घटक-1 सफेदजीरा 2 तुला, पाकार्थ-जल 8 द्रोण, अवशिष्टक्वाथ 2 द्रोण। 2-गुड़ 3 तुला। 3 धाय के फूलों का चूर्ण 16 पल। 4-सोंठ का चूर्ण 2 पल। 5-जायफल 1 पल। 6-मोथा 1 पल। 7-दालचीनी 1 पल। 8-छोटी इलायची 1 पल। 9-तेजपात 1 पल। 10-नागकेशर 1 पल। 11-अजवायन 1 पल। 12-शीतलचीनी 1 पल। 13-लौग 1 पल। नि.वि.-सबको मिलाकर घृतस्तिर्घ, धूपित और भूमि में गाड़े हुए मिट्टी के भाण्ड में भरकर यथाविधि बन्दकर एक मास तक पड़ा रहने दें। फिर छानकर शीशियों में भर देवें। मात्रा व प्र.वि.—1 से 2 तो।। समान मात्रा में जल मिलाकर मोजन के बाद दोनों समय पीये। उपयोग—सूतिकारोग, संग्रहणी, अतिसार, प्रग्निमाद्य।

## (3) दशमूलारिष्ट (शा.सं.)। अधिकार-योनिव्याप्त (सूतिकारोग)।

घटक और नि.वि.—दशमूल 50 पल (शालपर्णी, पृश्नपृणी, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, गोखरू, अग्निमंथ, अरलु, पाटल, गंभारी प्रत्येक 5-5 पल), चित्रकमूल 25 पल, पोखरशूल 25 पल, लोध 20 पल, गिनोय 20 पल, आंवला 16 पल, वसासा 12 पल, खेरसार, विजयसार, हरड़ प्रत्येक 8-8 पल, कूठ, मंजीठ, देवदार, त्रिङ्ग, मुलेठी, भारंगी, कैथ, बहेड़ा, पुनर्नवा, चव्य, जटामांसी, फूलप्रियंगु, अनन्तमूल, कालाजीरा, निशोथ, रेणुका, रास्ना, पीपल, कपूर, हल्दी, सौंफ, पद्माख, नागकेशर, नागरमोथा, इन्द्रजौ, सौंठ, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि-प्रत्येक 2-2 पल। इन सबको जौकूट कर आठ गुने जल में पकावें। शेष क्वाथ चौथाई रखें। द्राक्षा 60 पल, जल 240 पल, शेष क्वाथ 60 पल। दोनों क्वाथों को मिलाकर मृदभाण्ड में डाल दें। प्रक्षेप—मधु 23 पल, गुड़ 400 पल, धाय के फूल 30 पल जीतलचीनी, नेत्रबाला, सफेद चन्दन, जायफल, लौंग, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपत्र, नागकेशर, पिष्पली प्रत्येक का चूर्ण 2-2 पल, कस्तूरी 1 शाण (3 मा.)। पूर्व क्वाथ में डालकर संधानकर छान लें। उपयोग—ग्रहणी, अरुचि, श्वास, कास, गुल्म, भगन्दर, वातरोग, अथरोग, वसन, कामला, कोठ, अर्ण, प्रमेह, मन्दाग्नि, उदररोग, शर्करा, पथरी, मूत्रकुच्छ, धातुक्षय में हितकर है। कृश लोग पुष्टिलाभ व बांझ स्त्री गर्भ प्राप्ति करती है। तेज, बल देता है। यह वातकफज सूतिकारोगों में उत्तम पाया गया है।

## (4) पत्रागासव-(भै.र.)। अधिकार-प्रदर।

घटक—पत्रांग (पतंगकाष्ठ) खदिरकाष्ठ, अडूसा, सेमल के पुष्प, बला, भिलावा, श्वेतसारिवा, कृष्णसारिवा, जपापुष्प की कलियाँ, आम की गुठली, हारुहरिद्रा चिरायता, अफीम की डोडी, श्वेतजीरा, लौहभस्म, रसीत, कच्चे वेल-फल का गूदा, भूंग-राज, दालचीनी, केशर, लंबंग। प्रत्येक 1-1 पल। द्राक्षा (मुनक्का) कल्क 20 पल। धाय के फूल 16 पल। जल 2 द्रोण। शर्करा 1 तुला, मधु 1/2 तुला। नि.वि.-सबको मिलाकर मृतिकाभांड में रखकर संधान करें। एक मास बाद छान कर काम में लेवें। मात्रा-2 तो।। प्र.वि.—पान, समसाग जल मिलाकर। उपयोग—ममकर श्वेत व रक्तप्रदर, ज्वर, पाण्डु, शोथ, मन्दाग्नि, अरुचि।

## (5) लक्ष्मणारिष्ट—(भै.र.)। अधिकार—प्रदर।

घटक—लक्ष्मणामूल 100 पल, जल 4 द्रोण, शेष क्वाथ 1 द्रोण, गुड़ 2 तुला, धाय के फूल 16 पल, मोथा, महुआ, बला, त्रिफला, हल्दी, दारुहल्दी, जीरा, श्वेतचन्दन, अजमोद, अजबायन, बेलगिरी। प्रत्येक 1-1 पल। नि.वि.-विधिवत् सास-रक्तचन्दन, अजमोद, अजबायन, बेलगिरी। प्रयोग—सूतिकारोग, संग्रहणी, अतिसार, पर्यन्त संधान कर काम में लें। मात्रा—1 तोला। पान। उपयोग—स्त्रीरोगताशक है। (विशेष रूप से गर्भप्रद है)।

## (7) रस और वटी

(1) अपामार्गदिवटी (भै. र.) अधिकार—योनिव्यापत् ।

घटक—अपामार्ग की जड़ का चूर्ण, गेहुं का आटा, कत्था, शु. अफीम । समभाग । जल से घोटकर 2 र. की वटियां बनावें । प्रयोग—घृताक्त कर योनि में धारण ।

उपयोग—अत्यन्त रक्तस्राव को रोकती है ।

(2) इन्दुशेखर रस (भै. र.) । अधिकार—गर्भिणीरोग ।

घटक—शु. शिलाजीत, अभ्रकमस्म, रसमिदूर, प्रवालमस्म, लौहभस्म, स्वर्णमास्किकमस्म, शु. हरताल । समभाग । भावना—भांगरा, अडूसा, अर्जुन, निर्गुण्डी, स्थलकमल, जलकमल, कुड़े की छाल, के पृथक् स्वरस या क्वाथ से । वटी-प्रमाण मटरवत् । मात्रा—1 वटी । अनुपान—दोषानुसार । उपयोग—गर्भिणी के घोर ज्वर, श्वास, कास, शिरःपीड़ा रक्तातिसार, ग्रहणी, वमन, अग्निमांद्य, ग्रालस्य, दौर्बल्य । विशेष—कलियुग के प्रारम्भ में शंकर ने बनाया है ।

(3) कुमारिकावटी (भै. र.) । अधिकार | योनिव्यापत् ।

घटक—एलुआ (घृतकुमारीसार), शु. अफीम, हीराकसीस, वंगभस्म, शीतलचीनी समभाग । नि. वि.—जल से घोटकर 2-2 र. की गोलियां बनावें । प्रयोग—1-1 वटी, जलानुपान से 3 बार । उपयोग—मक्कलताशूल, जरायुशूल, योनिशूल, दाहणा बाधकरोग । रजःस्राव के चार दिन पूर्व अथवा आर्तवकाल में देवें ।

(4) गभवलासरस और गर्भचिन्तामणिरस (भै. र.) अधिकार—गर्भिणीरोग। घटक—शु. पारद, शु. गन्धक, शु. तुर्थ । प्रत्येक 1-1 तो । नि. वि.—जम्बीरी नींबू का रस व त्रिकटुब्बवाथ से तीन-तीन बार भावित कर, सुखाकर रख लें । मात्रा—2 से 4 र. मधु से । उपयोग—गर्भशूल, विवंध, ज्वर, अजीर्ण । गर्भचिन्तामणि रस—इस रोग में तुर्थ के बजाय । तो. स्वर्णमिस्म मिलाने पर ग.चि.र. बनता है ।

(5) गर्भविनोदरस (भै. र.) अधिकार—गर्भिणीरोग ।

घटक—जावित्री, लौंग 3-3 कर्ष, त्रिकटु 3 कर्ष, शु. हिंगुल, 4 कर्ष, स्वर्णमास्किक-2 कर्ष । जल के साथ घोटकर 2-2 र. की वटियां बना लें । मात्रा—1 वटी । आदर्दकरस या गरमजम से । उपयोग—गर्भिणी के सब रोग ।

(6) गर्भचिन्तामणिरस (दि) [भै. र.] अधिकार—गर्भिणीरोग ।

घटक—शु. पारद, रजतभस्म, लौहभस्म प्रत्येक 1-1 कर्ष । अभ्रकमस्म 2 कर्ष । कपूर, वंगभस्म, ताम्रभस्म, जायफल, जावित्री, गोखरू, शतावरी, बत्ता, अतिबलामूल. प्रत्येक 1-1 कर्ष । जल के साथ घोटकर दो-दो र. की गोलियां बनावें । मात्रा—1 गोली जल से । प्रयोग—सन्निपात, गर्भिणी-ज्वर, दाह, प्रदर, सूतिकारोग ।

(7) गर्भचिन्तामणिरस (वृहद) । (भै. र.) अधिकार—गर्भिणीरोग ।

घटक—शु. पारद, शु. गन्धक, स्वर्णमस्म, लौहभस्म, स्वर्णमास्किकमस्म, शु. हरताल,

वंगभस्म, अभ्रकमस्म । समभाग । यथाविधि त्राही, अडूसा, भांगरा, पित्तपापडा और दशमूल के पृथक्-पृथक् स्वरस या क्वाथ से 7-7 बार भावितकर 1-1 र. की वटी बनावें । मात्रा—1 वटी मधु से । उपयोग—गर्भिणी के सब रोग ।

9. गर्भपालरस (र. च) अधिकार—गर्भिणीरोग ।

घटक—नि. वि.—शु. हिंगुल, नागभस्म, वंगभस्म, वडी इलायची के बीज, दालचीनी, तेजपात सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया, कालाजीरा, चव्य, मुनबका, देवदारा प्रत्येक 1-1 तो, लेकर सूक्ष्मचूर्ण बनालें फिर लौहभस्म 6 मा. मिलाकर व्येतपुष्पवाली विष्णुकांता की जड़ के रस से 7 दिन तक घोटकर, मटर के बराबर गोलियां बनालें । मात्रा—1-1 गोली, 3 बार, नागकेशरचूर्ण 1 मा. और मधु के साथ मिलाकर खिलावें । उपयोग—गर्भ की रक्षा और पोषण होता है ।

10. चन्द्रप्रभावटी—(शा.सं.) घटक—चन्द्रप्रभा, वच, नागरमोथा, चिरायता, गिलोय, देवदार, हल्दी, अतीस, दालहल्दी, पीरामूल, चित्रकमूल, धनिया, हरड़, वहेड़ा, आवलां, चव्य, विडंग, गजपीपल, सोंठ, मरिच पीपल, स्वर्णमास्किकमस्म, सज्जीक्षार, यवक्षर, सेवानमक, कालानमक, विडनमक । प्रत्येक 1-1 शारण (3-3 माशा) निशेय, दत्ती की जड़, तेजपात, दालचीनी, छोटी इलायची, वशनोचन-प्रत्येक 1-1 कर्ष, लौहभस्म 2 कर्ष, मिश्री 4 कर्ष, शुद्ध शिलाजीत 8 कर्ष, शुद्ध गुग्गुलु 8 कर्ष । नि. वि.—प्रथम कुछ गरमजल या गरम दूध लेकर उसमें गूगल डालकर मिला लेवें । फिर मिश्री और शिलाजीत डालकर घोट लेवें, पश्चात् अन्य द्रव्यों का चूर्ण मिलाकर घोटें । जब गोली बांधने जैसा हो जाये तो गोली बना लेवें । मात्रा—4 र. से 2 मा. । मन्दोषण दुख या जल । उपयोग—अनुपान—भेद से समस्त रोगनाशक है । बीस प्रमेह-मूत्रकुच्छु, मूत्राधात, अश्मरी, विवंध, आनाह, शूल, मेहनरोग, ग्रन्थि, अवृद्ध, प्रदृढ़ि, पाण्डु, कामला, हलीमक, अन्त्रवृद्धि, कटिशूल, श्वास, कास, विचर्चिका, कूष्ठ, अर्श, कण्डु, प्लीहोदर, भगन्दर, दन्तरोग, नेत्ररोग, स्त्रियों के आर्तवसम्बन्धी रोग पुरुषों के शुक्रगत दोप, मदाग्नि, अरुचि, वात, पित्त, कफ के रोग का नाश करती है । बल्य, वृष्य, रसायन है ।

विशेष—(1) 'चन्द्रप्रभा' शब्द से 'कचूर' या 'कपूर' या 'शतावरी' या 'वाकुची' द्रव्य लिया जाता है । कचूर ठीक है । (1) 'मुखबोधकार' ने चन्द्रमा के प्रसाद से यह वटी प्राप्त होने से इसे 'चन्द्रप्रभा' कहा है (3) उपयुक्त द्रव्यों के साथ कुछ गन्धों में कज्जली 4 कर्ष, अभ्रक 4 कर्ष और रससिन्दूर 4 कर्ष मिलाने का विधान भी मिलता है ।

11. नष्टपुष्पान्तक रस—भै. र. । अधिकार—योनिव्यापत् ।

घटक—पारद, गन्धक, लौहभस्म, वंगभस्म, शु. टंकण, रजतभस्म और ताम्रभस्म । प्रत्येक 1-1 पत । भावना गिलोय, त्रिफला, दन्ती, हारतिगार, कटेरी, दालहल्दी, जीवन्ती, कूठ, बड़ी कटेरी, मकोय, हल्दी, तालीसपत्र, बेत की कोंपला, गोखरू, अडूसा, खरेटी । इनके स्वरस या क्वाथ से पृथक्-पृथक् 3-3 बार भावना दें । फिर सेवानमक,

मुलेठी, दंतीमूल, वंशलोचन, रासना, गोखरू, प्रत्येक 1-1 शासा (3-3 माशे) चूर्ण मिलाकर, पुनः भावना-जयन्ती और तुलसी के रस से घोटकर गोलियाँ बनावें। मात्रा—1-2 रत्ती। अनुपान-उष्णोदक। उपयोग नष्टार्तव, नष्टशुक्र, योनिशूल, कृष्टुशूल, क्लेद-यानि, ग्रामवात्।

### 11. प्रतापलंकेश्वर रस (यो.र.)। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—शु. पारद, अभ्रकभस्म, शु. गन्धक 1-1 भाग, मरिच चूर्ण 3 भाग, लौह-भस्म 4 भाग, शंखभस्म 8 भाग, जंगली छाणों की भस्म 16 भाग, शुद्ध वत्सनाभ 1 भाग। जलक्षणचूर्ण बनाकर रखें। मात्रा—1 से 3 रत्ती। आर्द्रकस्वरस, मधु से। उपयोग—प्रसूतिवात में जब दांत बैठ जावे तो आर्द्रकस्वरस से, कफरोग व अर्श में गुग्गुलु, गुडूची, आर्द्रक व त्रिफला क्वाथ से, सन्तिपातज, उप्रज्वर में आर्द्रकरस से, अतिसार व ग्रहणी में निजानुपान से देवें। विशेष—यह पार्वती ने कहा है।

### 13. प्रदरारिलौह (भै.र.)। अधिकार—प्रदर।

घटक—कूड़े की छाल 1 तुला को 2 द्रोण जल में अब्टमांशावशेषपर्यन्त पकाकर; छानकर, पुनः पकावें। फिर गाढ़ा होने पर उसमें मजीठ या लाज्जालु, सेमल, पाठा, बेलगिरि, मोथा, धाय के फूल, अतीस, अभ्रकभस्म, लौहभस्म प्रत्येक 1-1 पल मिलाकर 2-2 माशे की वटियाँ बनाकर रखलें। मात्रा—कोल (2 माशे पर्यन्त) कुशमूल क्वाथ के अनुपान से लें। उपयोग—अवेत, रक्त, नील, पीत वर्ण का प्रदर, कृक्षिशूल, सर्वदेहशूल नाशक, आयुपुष्टिकर, बलवर्णाग्निवर्धक।

### 14. प्रदरान्तकरस (भै.र.) अधिकार—प्रदर।

घटक—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, वंगभस्म, रजतभस्म, खर्परभस्म, वराटिकाभस्म। प्रत्येक 1-1 शासा। लौहभस्म 3 कर्ष। नि.वि.—प्रथम पारद-गन्धक की कज्जली बनाकर, शेष औषधियाँ मिलावें और ग्वारपाठे के रस के साथ एक दिन घोटकर, सुखाकर रख लें। मात्रा—1 से 2 रत्ती। उपयोग—चसाध्य प्रदर को भी नष्ट करता है।

### 15. प्रदरान्तकलौह (भै.र.) अधिकार—प्रदर।

घटक—लौहभस्म, ताम्रभस्म, शु. हरताल, वगभस्म, अभ्रकभस्म, कपदभस्म, त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, विडंग, सैधव, सामुद्र लावण, विडलवण, कालानमक, रोमकलवण, चव्य, पिप्पली, शंखभस्म, वचा, हाऊब्रेर, कूठ, कच्चूर, पान, देवदाह, छोटी इतायची, विधारा प्रत्येक समभाग। नि.वि.—जल में घोटकर 4-4 र. की वटियें बनायें। मात्रा—3 से 6 माशा। शर्करा, धूत व मधु के सहपान से लेवें। उपयोग—रक्त, श्वेत, पीत, नील, दुस्तर प्रदर, कृक्षिशूल, कटिशूल, योनिशूल, मन्दाग्नि, अरुचि, पांडु, कृच्छ, साध्य श्वास, कासनाशक है। आयुष्कर, पुष्टिकर, बल्य, रज के वर्ण का प्रसादन करने वाला है।

### 16. प्रदरारिरस (भै.र.) अधिकार—प्रदर।

घटक—वंगभस्म, लौहभस्म, शुद्ध अफीम, पड़गुणगंधकजारितपारद (रससिन्दूर)

लालकमल की जड़, लालचन्दन। प्रत्येक समभाग। नि.वि.—सबको अणोक की छाल के क्वाथ से भावित कर चने के बराबर गोलियाँ बनावें। मात्रा—2 गोली। अनुपान-प्रशोक छाल का क्वाथ। ऊपयोग—1 श्वेत और रक्तप्रदर, वस्तिशूल, रक्तस्राव, मयंकर ज्वर, बहुमूत्र। 2 अणोक की छाल, गिलोय, अडूपा, रसीत, मोथा प्रौर लालचन्दन के क्वाथ के अनुपान से सब प्रकार के प्रदर नष्ट होते हैं।

### 17. प्रदररिपुरस—भै.र., यो.र.। अधिकार—प्रदर।

घटक—शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, सीसकभस्म, प्रत्येक 1-1 कर्ष, रसीत 3 कर्ष पठानी लोधचूर्ण 6 कर्ष। भावना—अडूसे का रस या क्वाथ। मात्रा—2 बल्ज (2 रत्ती ही लें), मधु से। ऊपयोग—दुःसाध्य प्रदर।

### 18. बोलादिवटी (सि.यो.सं.)।

घटक—हीराबोल (यूनानी मुरमकी) 2 भाग, शु. टंकण 1 भाग, कासीस 1 भाग, एलुआ 1 भाग। सबको जटामांसी के क्वाथ में पीसकर 2-2 र. की गोलियाँ बनालें। मात्रा—2-2 गोली, प्रात. सायं, जल से। ऊपयोग—रजोदर्शन ठीक होता है।

### 19. बोलपर्टी (यो.र.)। अधिकार—प्रदर।

घटक—शु. पारद 1 भाग, शु. गंधक 1 भाग, रक्तबोल 2 भाग। (कज्जली बनाकर पर्पटी बनावें।) मात्रा—2 र.। ऊपयोग—सब प्रकार के रक्तप्रदर।

### 20. बोलबद्ररस (चि.त.प्र.)

अधिकार—असृगदर। घटक—शु. पारद 5 भाग, शु. गंधक 5 भाग, गुडूचीसत्त्व 5 भाग, रक्तबोल 15 भाग। भावना—शालमलीत्वक्कपाय 1 मात्रा—2 से 3 र.। उपयोग—रक्तप्रदर।

### 21. महाभ्रवटी—भै.र.। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, लौहभस्म, शु. गंधक, शु. पारद, शु. मैनमिल, शु. टंकण, यवक्षार, हरड़, बहेडा, आवलां-प्रत्येक 1-1 पल, शु. वत्सनाभ 4 माशा।

भावना—ग्रीष्मसुन्दर (गूमा), अडूसा, पान के रस से पृथक्-पृथक्। कुछ द्रवांश रहने पर 1 पल मरिच-चूर्ण मिलाकर रख लें। मात्रा—2 से 4 र.। मधु से।

उपयोग—अतिसार, शूल, सूतिकारोग, शोथ, पाण्डु, ज्वर।

### 22. महाभ्रवटी (द्वितीय) भै.र.। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—अभ्रकभस्म, लौहभस्म, शु. मैनमिल, ताम्रभस्म, शु. पारद, शु. गन्धक, शु. टंकण, यवक्षार, हरड़, बहेडा, आवला। प्रत्येक 1-1 तोले। कालीमिर्च 5 तोले।

भावना—ग्रीष्मसुन्दर, अडूसा, पान के रस से पृथक्-पृथक्। फिर 1-1 र. की वटिकाएं बना लें। मात्रा—1 र.। मधु से। उपयोग—सूतिकारोग।

### 23. रजप्रवर्तिनीवटी (भै.र.)। अधिकार—योनिव्याप्त।

घटक—शु. टंकण, शु. हिंग, कासीस, एलुआ। समभाग। भावना—कन्यास्वरस

से दोदिन। चने के बराबर वटी बनावें। उपयोग—रजोरोध, कष्टातंव व तजजन्य वेदनाण्।

**24. रत्नप्रभावटिका (मै.र.)। अधिकार—प्रदर।**

घटक—स्वर्णभस्म, मुक्तापिष्ठि, अभ्रकभस्म, नागभस्म, वंगभस्म, पित्तलभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, रजतभस्म, हीरकभस्म, लौहभस्म, शु. हरताल, खर्परभस्म। समभाग।

भावना—कदलीकन्द, मकोय, अदूसा, कमलपत्र, जयन्तीपत्र, कपूरजल। दिनभर में घोटकर 1-1 र. की गोलियां बनालें। मात्रा—1-1 गोली, प्रातः साथ, बलाकवाथ या कोण्डादुध से या भृंगराजस्वरस से। उपयोग—सर्वस्त्रीरोगनाशक, बल्य, वृष्य, रसायन। (इयं रत्नप्रभा नामी वटिका सर्वसिद्धिदा।)

**25. रसशादूल—(मै.र.)। अधिकार—सूतिकारोग।**

घटक—अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, लौहभस्म, कांतपापाणभस्म, शु. पारद, शु. गंधक, शु. टंकण, कालीमिर्च, यवक्षार, शु. हरताल, त्रिफला, शु. वत्सनाभ, प्रत्येक 1-1 कर्ष। भावना—ग्रीष्मसुन्दर व पान के स्वरस से 7-7 बार। 2-2 र. की वटी बनावें। मात्रा—1 से 2 र. मधु से। उपयोग—ज्वर, कास, अंगग्रह, सूतिकारोग, शोथ।

**26. रसशादूल (महान्) मै.र.। अधिकार—सूतिकारोग।**

घटक—अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म, शु. गंधक, शु. पारद, शु. मैतसिल, शु. टंकण, यवक्षार, त्रिफला 1-1 पल। शु. वत्सनाभ 1/2 पल। दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात जावित्री, लौंग, जटामांसी, तालीशपत्र, सुवर्णमाक्षिकभस्म, रसौत, प्रत्येक 2-2 कर्ष। भावना—ग्रीष्मसुन्दर व पान के रस से 7-7 बार। घोटते समय कुछ द्रव रहने पर। पल मरिच चूर्ण डालकर रख लें। मात्रा—2-4 र. मधु से।

उपयोग—विविधरोग, ज्वर, दाह, वमन, भ्रम, अतिसार, ग्रनिमांद्य, अरोचक, विशेष रूप से गभिरणी व सूतिका के रोग।

**27. लक्ष्मणालौह (मै.र.)। अधिकार—प्रदर।**

घटक—लक्ष्मणा का पचांग या मूल 100 पल लेकर 1 द्रोण जल में पकाकर, अष्टमांश शेष रखें, छानकर पुनः पकावें। गाढ़ा होने पर उसमें अशोक की छाल, कुशा की जड़, महुआ, मुलेठी, बला, पाठा, वेलगिरी प्रत्येक 1-1 पत्र, लौहभस्म, 7 पल मिलाकर गोलियां बनावें। मात्रा—2-4 र.। उपयोग—स्त्रियों के सब रोग।

**28. लक्ष्मीनारायणरस—(मै.र.)। अधिकार—सूतिकारोग।**

घटक—शु. गंधक, शु. टंकण, शु. वत्सनाभ, शु. हिंगुल, कुटकी, अतीस, पिप्पली, कुड़े की छाल, अभ्रकभस्म, सैधवलवण। समभाग। भावना—दंतीमूल व मदनफलकवाथ से 3-3 दिन। वटीप्रमाण—2 र.। मात्रा—1 से 2 र.। उपयोग—ज्वर, सन्तिपात, विसूचिका, विषमज्वर, अतिसार, ग्रहणी, रक्तातिसार, आमातिसार, प्रमेह, शूल, सूतिकारोग, प्रसूतिवात।

**29. विजयादिवटी (मै.र.)। अधिकार—योनिव्यापत्।**

घटक—भांग का सत्व, एलुआ, लालकमल की जड़, अपामार्ग की जड़। समभाग। नि.वि.—जल से खरल कर 2-2 र. की वटी बनावें। उपयोग—कटिशूल, जरायुशूल, बाधकवेदना, कष्टातंव, विषमरजःस्त्राव।

**30. शिलाजतुवटिका (मै.र.)। अधिकार—प्रदर।**

घटक—शु. पारद, शुद्ध गन्धक को 1-1 पल लेकर, कज्जली बनाकर, लालकमल के स्वरस व कुड़े की छाल के कवाथ से दो दिन घोट लें। फिर उसमें शुद्ध शिलाजतु, श्वेत मिश्री 8-8 पल, वंशलोचन, पिप्पली, आंवला, काकडासींगी, छोटीकटेरी के फल व मूल, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात प्रत्येक 1-1 पल। सबको मिलाकर 1 पल मधु मिलाकर, घोटकर 1-1 र. की वटिकाएं बनालें। मात्रा—1 से 2 वटी। अनुपान-अनार-रस, दुध, पक्षियों का मांसरस, सुवासितजल। इसे भोजन के पूर्व या पश्चात् सेवन करें।

उपयोग—पाण्डु, कुष्ठ, ज्वर, प्लीहावृद्धि, तमकश्वास, अर्ण भग्नदर, मलकी दुर्गंध, मूत्रदोष, प्रमेह, उदररोग, कास, रक्तस्राव, रक्तपित्त, रक्तप्रदर।

**31. सर्वज्ञसुन्दररस—(मै.र.)। अधिकार—प्रदर।**

घटक—पक्व इष्टिका के समानरक्तवर्ण की शुद्ध अभ्रकभस्म 1 पल, शुद्धटंकण 1 कर्ष, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, कपूर, जटामांसी, जावित्री, सुगंधबाला, मोथा, नागबेशर, लौंग, कूठ, हरड़, बहेड़ा, आंवला, प्रत्येक 1/2-1/2 शारण। नि.वि.—सबको मिला, जल के साथ घोटकर 2-2 रत्ती की गोलियां बनालें। मात्रा—2 रत्ती। उपयोग—सब प्रकार का प्रदर, अंगमर्द, अस्सी प्रकार के वातरोग, मन्दाग्नि, ज्वर, संग्रहणी, रक्तपित्त, अरुचि, पंचविध कास, प्रतिश्याय, हृदयरोग।

**32. सूतिकाविनोदरस (मै.र.)। अधिकार—सूतिकारोग।**

घटक—शु. पारद, शु. गंधक, शु. तुत्थ। समभाग। भावना—जम्बोरीस्वरस से 3 दिन, फिर त्रिकट्रवाथ से 3 दिन। वटी 4-4 रत्ती की बनावें। मात्रा—2-4 र.। शहद से। उपयोग—गभिरणीशूल, विष्टभ, ज्वर, अजीर्ण।

**33. सूतिकाविनोदरस (वृहत्) (मै.र.)। अधिकार—सूतिकारोग।**

घटक—शुष्ठी 1 भाग, मरिच 2 भाग, पिप्पली 3 भाग, रोमकलवण 1/2 भाग, जावित्री 2 भाग, शु. तुत्थ 2 भाग। भावना—निर्गुणीपत्रस्वरस से एक याम तक। मात्रा—1 से 2 र., मधु से। उपयोग—सूतिकारोगनाशक।

**34. सूतिकारिरस (मै.र.)। अधिकार—सूतिकारोग।**

घटक—शु. पारद 1 भाग, शु. गंधक 1 भाग, कुष्ठग्राभ्रकभस्म 1 भाग, ताम्रभस्म 1/2 भाग। भावना—मङ्गूष्ठपर्णीरवरस। वटीप्रमाण 1/2 र. या मटरसमान। मात्रा—1 वटी आर्द्धकरस से। उपयोग—सूतिकारोग, ज्वर, तृणा, अरुचि, शोथ। पाचकाग्निवर्धक है।

**35. सूतिकाधनरस (मै.र.)। अधिकार—सूतिकारोग।**

घटक—शु. पारद, शु. गंधक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, जावित्री, कालानमक, सम-

भाग। भावना-बकरी का दूध। वटी-प्रमाण 2-2 र.। मात्रा—2 र.। शहद से।

उपयोग—सूतिकारोग, ज्वरातिसार, कास, श्वास, अतिसार। विशेष-ब्रह्मा द्वारा निर्मित।

36. सूतिकान्तरस (भैर)। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—शु. पारद, अभ्रकभस्म, शु. गंधक, त्रिकटु, स्वर्णमालिकभस्म, शु. वत्सनाभा समभाग। मात्रा—1 से 2 रक्ति। मधु से। उपयोग—सूतिकारोग, संग्रहणी, अग्निमांद्य, अतिसार, कास, श्वास। उत्तम वाजीकरण है।

37. सूतिकारिरस (भैर.) अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—शु. टंकण, रससिंदूर, शु. गंधक, स्वर्णभस्म, जायफल, जावित्री, लौंग, छोटी, इलायची, धातकीपुष्प, कूड़ा की छाल, इन्द्रजी, पाठा, काकडसींगी, सोंठ, अजवायन। प्रत्येक  $\frac{1}{2}$ - $\frac{1}{2}$  तोले। भावना—गंधप्रसारणीस्वरस व क्वाथ से। मात्रा—4 र.। प्रसारणी-रस से। उपयोग—सूतिकारोग, जीर्णज्वर, संग्रहणी, प्लीहावृद्धि, कास।

38. सूतिकाबल्लभरस (भैर.) अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—शु. पारद, शु. गंधक, स्वर्णमालिकभस्म, अभ्रकभस्म, कपूर, स्वर्णभस्म, शु. हरताल, रजतभस्म, शु. अफीम, जावित्री, जायफल।

भावना—मोथा, बला, सेमलमूल का क्वाथ। वटीप्रमाण—2-2 र.।

मात्रा—1 से 2। मधु से। उपयोग—सर्वसूतिकारोग, दुर्वारणीय संग्रहणी, भयंकर अतिसार, दौर्बल्य, अग्निमांद्य। पुष्टि, मेघा, शोभा, धृति को बढ़ाता है।

39. सूतिकाभरणरस (भैर. R.)। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—स्वर्णभस्म, रजतभस्म, ताम्रभस्म, प्रवालभस्म, शु. पारद, शु. गंधक, अभ्रकभस्म, शु. हरताल, शु. मैतसिल, सोंठ, मरिच, पिण्पली, कुटकी। समभाग।

भावना—अर्कदुग्ध, चित्रकक्वाथ, पुनर्नवास्वरस से पृथक्-पृथक् भावित कर एक-एक माणे की टिकिया बनाकर, सुखाकर, गजपुट, में पकावें। फिर पीसकर रख लें।

मात्रा— $\frac{1}{4}$  से  $\frac{1}{2}$  र. मधु से। उपयोग—भयंकर सूतिकारोग, घनुर्वात, त्रिदोषज सूतिकारोग।

40. सूतिकाहररस (भैर.)। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—लौंग, शु. पारद, शु. गंधक, यवक्षार, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, ताम्रभस्म, नागभस्म—प्रत्येक 1-1 पल, जायफल, भूंगराज, त्रिफला, केशराज, मोथा, धाय के पुष्प, इन्द्रजी, पाठा, काकडसींगी, वेलगिरी, नेत्रवाला—प्रत्येक 1-1 कर्ष।

भावना—गंधप्रसारणी का स्वरस या क्वाथ। वटीप्रमाण—2 र.। मात्रा—2 र.।

मधु या गंधप्रसारणीस्वरस से। उपयोग—सर्व प्रकार के अतिसार, शूल, सूतिकारोग।

41. सूतिकाहररस (द्वितीय) भैर. R.। अधिकार—सूतिकारोग।

घटक—शुद्ध हिंगुल, शुद्ध हरताल, शंखभस्म, लौहभस्म, खपरभस्म, शु. धन्तूरबीज, यवक्षार, शुद्धटंकण। समभाग। भावना—वहेड़ा का क्वाथ। वटीप्रमाण—2 र.। मात्रा—1-2 र.। मधु से। उपयोग—सूतिकारोग।

(8) लेप

शोथहर चन्दनादिलेप—(यो.र.)। अधिकार—गर्भिणीरोग।

घटक—लालचन्दन, मुलेठी, खस, नागकेशर, तिल, मेषशृंगी, मंजीठ, अर्कमूल, पुनर्नवा। समभाग। पीसकर उषण कर लेप करें। उपयोग—विशेषकर गर्भिणियों का शेष शोथहर लेप है।

★

परिशिष्ट-3

(अध्याय 5 का अवशिष्ट अंश)

आयुर्वेद में जन्मजात जननांग विकृतियों का वर्णन

सुश्रुत ने व्याधियों का वर्गीकरण करते हुए सात प्रकार की व्याधियों का वर्णन किया है। इनमें प्रथम दो प्रकार सहज विकृतियों के अन्तर्गत आते हैं—

1. आदिबल-प्रवृत्त और 2. जन्मप्रबलप्रवृत्त।

'तत्र आदिबलप्रवृत्ता ये शुक्रशोणितदोषावन्याः कुष्ठार्षःप्रभृतयः, तेऽपि द्विविधाः—मातृजाः, पितृजाश्च। जन्मबलप्रवृत्ता ये मातुरपचारात् पञ्चात्यन्वद्विरमूकमिन्मिनवामनप्रभृतयो जायन्ते; तेऽपि द्विविधाः—रसकृताः दौहदापचारकृताश्च।' (सु.सू. 24/5)

'आदिबलप्रवृत्त' व्याधियों को दृढ़वाघभट ने 'सहज' संज्ञा प्रदान की है और 'जन्मबलप्रवृत्त' को 'गर्भजात' कहा है। स्त्रीबीज—जन्य और पुरुषबीजजन्य भेद से इसके दो वर्ग हैं।

तत् तत् दोष से दूषित पुंबीज और स्त्रीबीज के द्वारा जो रोग संतान में अवतरित होते हैं, उन्हें आदिबलप्रवृत्त या 'सहज' कहते हैं, जैसे—कुष्ठ, अर्ण, मधुमेह आदि। ये रोग स्त्री व पुरुष के संयोग होने से पूर्व ही उनमें उपस्थित दोषों के कारण उत्पन्न होते हैं अंग्रेजी में इन व्याधियों को 'हेरीडिटरी' (Hereditary) कहते हैं।

स्त्री और पुरुष के बीज में मनुष्य के शरीर के समस्त अङ्ग-प्रत्यंगों का विकास करने वाले 'बीजभाग' (अंश) विद्यमान रहते हैं। ये 'बी भग' काहि माता पिता के स्वसद्वश अंग-प्रत्यंगों और उनके गुण-दोषों को उत्पन्न करते हैं चक्रपाणि ने लिखा है—

'मनुष्यबीजं हि प्रत्यंगबीजभागसमुदायात्मकं' स्वसद्वशं प्रत्यंगसमुदायरूपपुरुष-जनकम्' (चक्रपाणि, च. शा. 3/17 पर)

बीज (Spermatozoa and Ovum) के बीजभाग (Chromosomes) में दोष-जन्य विकृति होने पर संतान में उस बीजभाग से उत्पन्न होने वाले प्रत्यंग में विकृति उत्पन्न होती है। चरक के शब्दों में देखिये—

"यस्य यस्य ह्यङ्गावयवस्य बीजे बीजभाग उपतत्वो भवति तस्य तस्याङ्गावयवस्य विकृतिरूपजायते, नोपजायते, चानुपतापात्" (च. शा. 3/17)।

आदिवलप्रवृत्त या सहज (Hereditary) रोगों की उत्पत्ति को सूचित करने वाली यह सम्प्राप्ति अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है। इसे सुप्रजनन के लिए आवश्यक तत्वों का परीक्षण त्रिवाह या स्त्री पुरुष संयोग से पूर्व कितना आवश्यक होना है, यह इसी से जाना जा सकता है।

अब दूसरे प्रकार के विकारों पर चिकार करेगे। 'जन्मबल-प्रवृत्त' या 'गर्भजात' व्याधियाँ गर्भधारण (स्त्री-पुरुष-बीज के संयोग) के बाद माता के अपचार (अहित आहार-विहारादि) से संतान में प्रादुर्भूत होती है। अंग्रेजी में इन व्याधियों को 'कन्जेनिटल' (Congenital) कहते हैं।

गर्भजात व्यधियाँ दो प्रकार की हैं (1) रसकृत (रस तथा विशेष प्रकार के अन्नपान के नित्य सेवन से होने वाले विकार अर्थात् दूषित गर्भपोषक रस-रक्त इसमें हेतु है)। विस्तार से वर्णन-चरक, शारीर अ. 8/21 पर देखना चाहिए।

(2) दौहूंदापचारकृत—स्त्री में गर्भधारण और गर्भ की अन्तःस्थिति के कारण होने वाली विशेष इच्छाओं और अद्वाओं का विघात होने से होने वाली व्याधियाँ। इसका वर्णन शु. शा. अ. 3/23-28 पर देखा जा सकता है।

गर्भविस्थाकाल में किस प्रकार जन्मबलप्रवृत्त व्याधियों का प्रादुर्भाव होता है? इसका विशिष्ट वर्णन चरक ने निम्न पंक्तियों में किया है।

'यतस्तु कात्स्त्येनाविनश्यन् विकृतिमापद्यते, तदनुव्याख्यास्यामः यदा स्त्रिया दोष-प्रकोपणोक्तान्यासेवमानाया दोषाः प्रकुपिता. शरीरमुपसर्पन्तः शोणितगर्भशयावुपपद्यन्ते, तच कात्स्त्येन शोणितगर्भशयौ दूषयन्ति, तदेयं गर्भं लभते स्त्री, तदा गर्भस्य मातृजानामवयवानामन्यतमोऽवयवो विकृतिमापद्यत एवोऽयवाऽनेके, यस्य यस्य ह्यवगवस्य बीजे बीजभागे वा दोषाः प्रकोपमापद्यन्ते, तं तमवयवं विकृतिराविश्ति, यदा ह्यस्याः शोणिते गर्भशयबीजभागः प्रदोषमापद्यते, तदा 'वन्ध्यां' जनयति, यदा पुनरस्याः शोणिते गर्भशयबीज-भागावयवः प्रदोषमापद्यते, तदा 'पूतिप्रजा' जनयति यदा त्वस्याः शोणिते गर्भशय-बीज-भागावयवः स्त्री राणां च शरीरबीजभागानामेकदेशः प्रदोषमापद्यते, तदा स्त्रयाकृतिभूयिठामस्त्रियं वार्ता ('रान्तां' इति पाठान्तरे) नाम जनयति, तां स्त्रीव्यापदमाचक्षते' (च. शा. 4/30)। इस पर चक्रपाणि की व्याख्या भी दृष्टव्य है—

चक्रपाणि—'स्त्रीकाराणां शरीरबीजभागानामिति स्त्रीव्यञ्जकस्तनोपस्थलोमराज्यादिनक-बीजभागानाम्। अस्त्रियमिति असंपूर्णस्त्रीलक्षणाम्। वार्ता नामेति वार्ता संज्ञा शास्त्र-समयकृता। स्त्रीव्यादिति स्त्रीनिमित्ताऽर्तवदो कृता व्यापद्।'

इसी प्रकार पुरुषबीज-शुक्र में भी दोषजन्य विकृति हो जाने पर 'पुरुष-व्यापद' उत्पन्न होती है।

स्त्रीकर=स्त्रीव्यञ्जक और पुरुषकर=पुरुषव्यञ्जक भाव (शारीरिक और मानसिक) चरक के ही अनुसार निम्न हैं—

"सन्ति खल्वस्मिन् गर्भे केचिन्नित्या भावाः सन्ति चानित्याः केचित्। तस्य य एवाङ्गावयवाः सन्तिष्ठन्ते त एव स्त्रीलिङ्गी पुरुषलिङ्गं नपुंसकलिङ्गं वा ब्रिध्रति। तत्र स्त्रीपुरुषयोर्यै वैशेषिका भावाः प्रधानसंश्रया गुणसंश्रयाश्च। तेषां यतो भूयस्त्वं ततो-ज्यतरभावः। तद्यथा—कलैव्यं भीस्त्वमवैशारद्यं मोहोऽनवस्थानमधोगुरुत्वमसहनं शेथिल्य माद्वं गर्भशयबीजभागस्तथायुक्तानि चापराणि स्त्रीकराणि, अतो विपरीतानि पुरुषकराणि, उभयभागावयवा नपुंसककराणि भवन्ति।" (च. शा. 4/14)।

स्त्रीकर और पुरुषकर भावों के व्यामिश्र से नपुंसक या द्विलिंगी व्यक्ति की उत्पत्ति होती है।

सुश्रुत ने लिखा है—'तत्र शुक्रवाहुल्यात् पुमान्, आतंवबाहुल्यात् स्त्री, साम्यादुमयोनंपुं-सकमिति।' (मु. शा. 3/5)। यहाँ 'नपुंसक' शब्द में अनेक अर्थों का बोध होता है—  
(1) घंड या ब्लीब (Impotent)—यह पुरुषोचित्त कार्य करने में असमर्थ होता है। घ्वजोच्छाय नहीं हो पाता।

(2) हिज़ड़ा (Eunuch, Castrate)—इनमें वृषण बाल्यावस्था में निकाल दिये जाने से इनका पुरुषत्व नष्ट हो जाता है।

(3) द्विलिंग (Hermaphrodite)—इस अवस्था को द्विलिंगावस्था (Hermaphrodism) कहते हैं, चरक ने इसे 'स्त्रीपुंसलिंग' कहा है।

द्विलिंगी के दो प्रकार ऊपर बताये गये हैं—

(1) सत्यद्विलिंगी (True Hermaphrodite)—इनमें वृषण और बीजकोष तथा दानों (स्त्री-पुरुष) के बाह्य व्यंजक लक्षण पाये जाते हैं। चरकोक्त 'स्त्रीपुंसलिंगी' यही है। इसका हेतु बीजों की समानबलता, उपतप्तता और माता के आहार-विहारादि के दोष हैं। इस प्रकार यह 'जन्मबलप्रवृत्त या गर्भजात विकृति है।'

'बीजात्समांशादुपतप्तबीजात् स्त्रीपुंसलिंगी भवति द्विरेता:।'

'बीजात्सकमर्मशयकालदोषैर्मतुस्तथाहारविहारदौषैः।'

कुर्वन्ति दोषा विविधानि दुष्टाः संस्थानवर्णेन्द्रियवैकृतानि।" (च. शा. 2/18, 29)।

लिगपरिवर्तन हेतु पुंसवनविधि शास्त्र में निर्दिष्ट है।

(2) मिथ्याद्विलिंगी (Psuedo or Spurious Hermaphrodite)—इसमें एक लिंग की अधिकता और दूसरे की कमी पायी जाती है। लिंगाधिकता के आधार पर ये दो प्रकार के होते हैं—

(अ) जिसमें वृपसा (Tastes) होता है, परन्तु बाह्य व्यंजक लक्षणों में दोनों सम्मिश्रण होता है, उसे 'एन्ड्रोगैनाइड' (Androgynoid) और इस अवस्था को 'एन्ड्रोगिनी' (Androgynia) कहते हैं। चरकोक्त 'तृणपुत्रिक' (या 'तृणपूलिक') नाम पुरुषव्यापत् विकृति यही है। (च. शा. 4/31)

(आ) जिसमें बीजकोष (Ovary) होते हैं और बाह्य व्यंजक लक्षण मिश्रित

होते हैं, उसको 'गैनेंड्राइड' (Gynandroid) कहते हैं और इस अवस्था को 'गैनेंड्री' (Gynandry) कहते हैं। चरकोवत 'वार्ता' या 'रान्ता' नामक 'स्त्रीव्यापत्' यही है

(च. शा. 4/3)

चक्रपणि के अनुसार इनमें लिगानुसार व्यवायेच्छा होती है (लैंगिक ग्रन्थ विद्यमान होने से) परन्तु बाह्य जननेन्द्रियों के विकृत रहने से व्यवायसामर्थ्य नहीं हो (वार्तातुरापुत्रिक्योव्यवदायेच्छा परं भवति, न तु व्यवायसामर्थ्यमिति ब्रुवते ।

(च. शा. 4/31 पर चक्रपाणि)

इस द्विलिंगी विकृति के अतिरिक्त गभाशय, योनि, बीजवाहिनी आदि प्रजनन की जन्मजात विकृतियों के कारण और स्वरूप पूर्वाक्त चरक के शा. 3/17 और मुत्त 4/30 के वचनों की समीक्षापूर्वक समझा जा सकता है।

इन विकृतियों की गणना 'जन्मबलप्रवृत्त' और 'आदिबलप्रवृत्त' व्याख्याओं के गंत होती है। इनकी विशेष चिकित्सा का (पुंसवनविधि, लिंगपरिवर्त को छोड़कर वर्णन ग्रायुवंदीय ग्रन्थों में नहीं मिलता । )



### मानपरिभाषा

#### 1. मागधमान—माषटंकाक्षविल्वानि कुडवः प्रस्थमाढकम् ।

राशिद्रोणि खारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः ॥

4 माप	=	1 टंक (शाण)	4 प्रस्थ	=	1 आढक
4 टक	=	1 अक्ष (कर्ष—1 तोला)	4 आढक	=	1 राशि (द्रोण)
4 अक्ष	=	1 विल्व (पल)	4 राशि	=	1 द्रोणि
4 विल्व	=	1 कुडव	4 द्रोणि	=	1 खारी
4 कुडव	=	1 प्रस्थ			

#### 2. कालिगमान

12 मौरसंपंप	=	1 यव	4 शाण	=	1 गद्याण
2 यव	=	1 गुञ्जा	10 माश	=	1 कर्ष (तोला)
3 गुञ्जा	=	1 वल्ल	4 कर्ष	=	1 पल
8 गुञ्जा	=	1 माप	4 पल	=	1 कुडव
4 माप	=	1 शाण			

#### 3. पूर्व प्रचलित मान

8 रत्ती	=	1 माशा	4 छटांक	=	1 पाव
12 माशे	=	1 तोला (180 ग्रैन)	4 पाव	=	1 सेर
5 तोले	=	1 छटांक	40 सेर	=	1 मन